Tattvabodha Adi Shankaracharya - Hindi

1. Notice

This book was produced in EPUB format by the Internet Archive.

The book pages were scanned and converted to EPUB format automatically. This process relies on optical character recognition, and is somewhat susceptible to errors. The book may not offer the correct reading sequence, and there may be weird characters, non-words, and incorrect guesses at structure. Some page numbers and headers or footers may remain from the scanned page. The process which identifies images might have found stray marks on the page which are not actually images from the book. The hidden page numbering which may be available to your ereader corresponds to the numbered pages in the print edition, but is not an exact match; page numbers will increment at the same rate as the corresponding print edition, but we may have started numbering before the print book's visible page numbers. The Internet Archive is working to improve the scanning process and resulting books, but in the meantime, we hope that this book will be useful to you.

The Internet Archive was founded in 1996 to build an Internet library and to promote universal access to all knowledge. The Archive's purposes include offering permanent access for researchers, historians, scholars, people with disabilities, and the general public to historical collections that exist in digital format. The Internet Archive includes texts, audio, moving images, and software as well as archived web pages, and provides specialized services for information access for the blind and other persons with disabilities.

Created with hocr-to-epub (v.1.0.0)

The text on this page is estimated to be only 41.39% accurate

मी 2 विकार |" आाकओग (+र का हनडफक शिएुाए एन एन 0९ हुए ॥ श्रीः ॥ (२ (० 4 | तत्त्वबोधः। !! (रे ६) शंकरानंदप्रकाशिका (5 0 भाषाटीकासाहितः । ज़्सका श्रीस्वामीपकाशानरजी महाराजके रिष्य स्वामी वश का २ की. इन शंकरानदजान विमत [कया गंगानिष्णु श्रीकृणदासभीके | "लक्ष्मीवकटेश्वर " छापेखाने मुद्रित कर प्रकाशित किया । प्््ल्स छह ४ ठ ज्ल्खं ्।ए ४! ! है 0) कुँशर किसनडाल रईस क्योरारने ॥ /! ([| कल्याणमें | | 8

इस पुस्तकका रजिष्टरी सब हक सन् १८६७ के एक्ट २५ के बमुजब पुस्तककर्ताने व यन्त्राधिकारीने अपने स्वाधीन रक्खा है. बांदप्रातछना7080609ाता।.८एणा

प्रस्तावना । इस ग्रंथका मुल्य केवल जिज्ञासु प्रुषोंकी श्द्धामात्रही है ओर दूसरे सन्ोंकी रूपा इसका मूल्य है श्रीयुत परमहंसोपारसीन भुषण श्री १०८ श्री स्वामी केशवानंदजी महाराजके शिष्य श्रीस्वामी प्रकाशानंदजी महाराजके दास स्वामी शंकरानंदजीने निर्मित करा, और जिसको कुँमर साहिब कुमर रुष्णलाल पौंढे जिमीदार क्योरारसे सन्ोंकी प्रसन्नताके वारते और जिज्ञासु परुषोंके कल्याणके हेतु मुद्रित कर प्रकाश किया ओर इसी ग्रंथका तर्जुमा लाला गौरीशङुरजीके पत्र लाला रामसहाय वैश्य शिरौलीनिवासीने उर्दू भाषा करके सर्व जर्नेके हितार्थ छापेखाने नखलऊमें मुद्रित कराया है ओर आगे लिखे हुए ठिकानेपर यह दोनों प्रकारकी पस्तक मिलेगी परंतु दूरदेशी महाशयोसे मेरी हे प्राथना है कि पत्र भेजनेपरभी ढांकद्वारा बेरंग भेजी जाती है, लंड: “ _> बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

विज्ञापनम | इस तत्ववोधकी श्रीशंकरानंद प्रकाशिका भाषाटी का बनानेका वास्तव को३भी कारण नह क्यों कि जिसकर में यों कह कि दुःखरूप संसारमें जीवाको ड्ूबते हुए देखकर उनके उद्धारके हेतु, इसको कहता हूं ऐसा कहनाभी बनता नहीं किस लिये कि जेसे कोई पुरुष कहे कि मृगतृष्णाऊ जलमें वन्ध्याका पुत्र डूबता हे उसको में निकाढू यह कहना त्रिकालमेंभी नहीं बनता क्योंकि प्रथम तो म्रगतष्णाके जलकाही अत्यन्ताभाव हे अथात् तीन काल है नहीं ओर दूसरे वन्ध्याके पृत्रका होनाही अत्यन्त अम्तम्भव है तो फिर उप्तका डूबना ओर उत्तका निकालना कहों बन सक्ता हे इसी प्रकार प्रथम तो दुःखरूप संसारकाही अत्यन्ताभाव है ओर दूसर वन्ध्याके पुत्रवत् जीवका ढुःखरूप संसारमें डूबना अत्यन्त असम्भव है तो फिर उनके उद्धारका हेतु इस अपने कथनको कह तो केसे सिद्ध हो सक्ता है केवल चिद्विलास है अर्थात् चेतन्यका विछास हे वास्तव कथन श्रवण कुछ बनता नहीं.

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

पुस्तक मिलनेका ठिकानापास कुमर साहिब कुमर कृष्णठालजी। मुकाम बयोरार, रियासत रामपुर, डॉकेखाना मिलिक, पाप्त श्रीयुत रावजी साहिब श्री ३०८ श्रीमहाराज भुम्म॥ लजी के; मुकाम सासराज कराठी, ढाल रामसहाय चाधरी; मुकाम सिरोडी, मिला बाँपबरेली. वृबशीनों साहिब, वसश्ी प्यारे ठाल मेंबर कुमेटी। मुकाम पेसवी, जिला अलीगढ़, बांदप्रातछना7080609ाता।.८एणा

अथ अनुक्रमणिका, विषय . पृष्ठ. विषय. पृष्ठ, १ ओंकारचक्र. ... ३२९१ सूक्ष्मदरीरवर्णन ..... ५९१ ह प्स्तावर्वा, :.- 9२२ पांचज्ञानेंद्रियवणन..... ५२ है विज्ञान, .. ६२३४ कर्मेंद्रेयवर्णणन. .... ५४ ४ टीकाकारका मंगछाचरण. १२४ कारणशरीरवणन..... ५५ 3 सूत्रकारका मंगलाचरण. ३२७० तीन अवस्थावणन ७९ है अथका प्रयोजनवणन ४२६ जाग्रतअवस्थाव्णन.. ५९ ७ चारसाधनवणेन...... <२७ स्वप्तअवस्थावर्पन..... ६९ ८ #9०, ० रे । ध् कक क। +२८ सुषुतिअवस्थावणेन.. ६9 ९ गवण न. रे ११ शमवर्णन, | १९ अन्नपयकोशका वर्णन. ६७ १२ दमवणन .. ३९ प्राणणयकोशका वर्णन. ७१ ” जु ०. 5 ४ १३ उपरभवणेन. ९२ मनामयकांशवर्णन १३ तितिक्षावर्णन. ...... २६ रह विज्ञाममयकोशवणन. ७५ १० अूद्धावर्णन......... ३१ रै१ आनंदमयकोशवणेन. ४५ १६ समाधानवणन. .... ३४ १०५ आत्मा सचिदानंद १७ मुप्रक्छुतावणन. ..... ३७. स्वर्त्रृपव्णन. .... ७९ १८ तत्वविवेकाधिकारीवर्णन. 9१३६४ सचिदानंदाथवणन.... <०» १९ आत्मासाक्षीरपवर्णन. ०६४० मायासे पांचों तत्वोंकी २० स्थूलशरीरवर्णन..... ४७, उत्त्तिव्णन. ... ८३ बांद्प्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

ब् विषय. पृष्ठ, | विषय. पृष्ठ. ३८ पांचों तलोंसे ज्ञानंद्रिय. ४६ जीवन्मुक्तका छक्षण
... और अंतःकरणकी उ- वर्णन... .... १०४७ स्पत्ति वणेन. ...... ＜8 ४७
अपरोक्षज्ञावणन..... १०६ ३९ अन्तःकरणका स्वरुप '४८ ज्ञानसे संपूर्ण कर्म्मे।की बणन.....
४२४६: - 6 ।निवात्त वर्णन .... ११३ ४० पांचों तत्वोंसे कर्मेंद्रिय 9९ आगामी
कमेवणेन..... ११४ ओर प्राणोत्पात्तंका वणन, ८८ ०५० संचितकृर्मवर्णनण, ... ११४७ ४१
पचीकरणवणन कट नह ९७०१ प्रारब्धकमे वर्णन. .... ११७ ४९ जीवइ-श्वरस्वरूपवणन. ९००२
ज्ञानवानके आगामी ४३ तत्वमसी महावाक्यसे कम्मोंके अधिकारी जीवईश्वरकी एकतामें
वर्भषन....... .... १२० प्रश्नोत्तवणेन. .... ९७५३ आत्मज्ञानका माहात्म्य ४४ ल्वंपदमें
जीवई्ंश्वकी | वर्णन. .... --« १२१ एकतावणेन.._.... १०२०४ गुरुशिष्यलक्षण वर्णन. १२४
४० तत्पदमें जीवईश्वरकी. [इतलि अनुक्रमणिका समाप्त, ५7.६0 0 0 + 4 एछएछणआ हि
....०>०.>2->2»-“ + >0».0.270>0:“ > > >ह..
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

The text on this page is estimated to be only 30.38% accurate

॥ 3/॥ अथ निग्णोपासनाचक्रम । ु शुद्धसत्त्वप्रधान मलिनगत्त्वप्रधान " । रू जायव् अवस्था जायत अवस्था: के /& रक्षा रथूलदारीर स्थूलशगी भर > > । हर समष्टि अभिमानी व्यप्टिअभिमारी >१) | . _विराट आत्मा पिभात्मा . 9. ्ि ० ५ 4 6 ।|॥7 ।|।|| ि: अभट दर 60 ; ्टि वास्तव अभद 3०४३ न ह 2७ जाजहतकफप।प,पंपपयपप घ् | २ | «मे हि ० ट्टि 3' ५४ सं ज रू ्य ० 75 दि गु रह रु है | | ८५ हि [7 ७ 20 कि 0 हा कह व | गा श्र | (ट | ०] व्ल्वी । नकल | जि । 24 छ | तप | ि 2 9 “ + |क्त 2" 4 हा कि के ५ जज टि | थ मे अय व है आयरायतआसा हर व हिच ही य प् ह >(04६ ॥०)93] 8 | मं आअध्य जे ६४5 [६ | । _।छछ। / | |4 ॥७४2।४!४ ही आाक हल ५९६. ७६ _७४४४७।६६॥७० |. ३७॥७/५।४६१।७४ १4 «६ _ 2[५५॥७७७।५ 29।4॥00%[५५ डे जरननननननकननप 2 3 +*३५ 4 हे 5 न <पत &८ /83(20६038 £ 083:4६6 ७। ४४ [है | 8४४+9/2॥४ | ॥.॥६४:०७४ ६ इत्योंकाराथः ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

॥ हरि! ३४ ॥ | शंकरानद्प्रकाशिकाभाषादी का त ढितः तत्त्वबीचः। ७-० परः के)
- मत +०<९७७-+-+ + > अथ टीकाकारका मंगठाचरण, ॥ दोह|॥ अआनंदप्रकाश विभु, जिनमें जक्त असार ॥ सो निज आतमरूप लख, नमो करूं उरधार ॥ १ ॥ तिनकी कृपा दृष्टिसें, तत्तबोध कर कोन ॥ शंकरानंदप्रकाशिका, भाषा भाष्य नवीन ॥ २॥ टीका ॥ श्री ॥ अर्थात् शांतस्वरूप जो मेरे गुरु प्रकाशानंदर्नी महाराज हैं तिनको में परम प्रियरूप अपना आत्मा रूपकर हृदपमें घारण करफ़े नमस्कार बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८ए

 करता हूं. केसे हैं मेरे गुरू कि नो ॥ विधुः ॥ अथांत् संपूर्ण जग़तमें व्यापक हैं (तंतुपटवुत) जेसे वद्नके बीचमें व्याप्प और व्यापक अथांत् टेढे ओर सूधे थागे एक है दूसरा कोई नहीं इसी प्रकार मेरे गुरु आपही व्यापक हैं ओर आपही व्याप्य हैं ॥ ओर फिर केसे हैं कि, जिनमें संपूण जगत् ॥ अस्तार ॥ अथोत् कल्‌िपित है कि, जसे सुवर्णके बीचर्म कटककुंडलादिक भ्रूषण कल्पित हैं और मृत्तिकामें घटमठादिक पदार्थ कृटिपत हैं इसी प्रकार मेरे गुरुम संपूर्ण जगत् कृट्पित है ॥ वास्तव जो कुछ हृश्याटइंय है सो सब मेरे गुरुही हैँ॥ १ ॥ तिन गुरुओंकी कृपादएिसें तत्तवोधकी शेकरानंदप्रकाशिका नवीन भाषाटीका रची जाती है कि, जिसके विचारसे शीघ्रही अनथेकी निवृत्ति ओर परमानंदको प्राप्तिरुप माक्षकों पुरुष प्राप्त होंगे ॥ परंतु इस ग्रंथ करके वही पुरुष आनंद उठावेंगे कि; जिनको अपने श्रीगुरुके चरणोमें पूर्ण प्रीति शेगी ॥ क्योंकि, आत्मतत्वके ठखानेवाले श्रीगुर्द्दी हैं ॥ २॥
बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ३ ॥ अथ सूत्रकारका मंगलाचरण॥ ॥छोक। वासुदेवेन्द्रयोगीन्द्रं नत्वा ज्ञान प्रदं गुरुम ॥ मुमुक्षणा हिताथोय तत्तववी धोभिधीयते॥ १॥ अन्वयः ॥ मया शंकराचार्यण तत्वबोधः अभिभीयते ॥ कि रुत्वा वासुदेवेन्द्रयोगीनद्द गुरुं नत्वा ॥ कर्थंभूर्त गरुं ज्ञानमदमू ॥ कस्मे प्रयोजनाय अमुक्षूणां हितार्थाय ॥ इत्यन्चयः ॥ ३ ॥ टीका।में नो शंकराचाये हूँ सो तत्व जो आत्मा तिसका जो ज्ञान तिसको कहता हूँ अथवा तत्व जो प्रथिवी जल तेज वायु आकाश तिनका बोध अर्थात् कार्य कारण प्रकार तिसको कहता हूं॥ क्या करके कि वासुदेवेन्द्रयोगीन्द्र अर्थात् सच्चिदानंद्स्वरूपान्तयामी जो हैं मेरे मुरु तिनको नमस्कार करके ॥ केसे गुरुको॥क्षानके देनेवाढे॥ ऐसे गुरुकी नमस्कार करके मुमुक्षुननोंके हिताथें अथोत् ॥ दुःखरूप जो संसार तिससे निवृत्त होकर परमानंदस्वरूप जो अपना आत्मा तिसको प्राप्त होनेकी बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

4; तेचबोध-टीका इच्छा है जिन पुरुषोंको तिनके कल्याणकरे अर्थ तलबोषको कहता हूँ ॥ १॥ ॥ अथ ग्रंथका प्रयोजन व्गन ॥ साधनचतुष्टयसम्पन्नाधिकारिण। मोक्ष सावनभूत तत्वववेक प्रकार वक्ष्यामः॥२॥ टीका॥ साधा जो चार तिन करके संपन्न जो अधिकारी तिनके वास्ते मोक्षत्राधनरूप जो तत्वविवेकका प्रकार ॥ अथोत् पृथिवी जल तेज वायु आकाश तिनका काय्य कारण भाव चेतन्यमें रुप होना॥ अथवा माक्षसाधनरूप जो ज्ञान ओर तत्वविवेकका जो प्रकार तिसको कहता हूँ॥ २ ॥ प्रश्न ॥ ज्ञान किसको कहते हैं ॥ १॥ उत्तर ॥ अन्तःकरणकी जो बल्याकार वत्ति तिसको ज्ञान कहते हैं ॥ १॥ _ शैक्रा॥ जित करके अन्तःकरणकी ब्रह्माकार वृत्तिफहि ज्ञान कहेंगे त| तित्कर के अवियाकी निृत्ति न' होगी क्योंकि मो काये होता हैं सो कारणकों नाश नहीं बांदप्रातवतना7080609ातुा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ५ कर सकता ओर अन्तःकरणकी वृत्ति तथा ओर नो कुछ हज्य प्रपंच है तिस सबका कारण अविद्ा है इसलिये कार्यरूप जो अन्तःकरणकी वृत्ति सो अपना कारणरूप जो अविया तिप्तको नाग नहीं करेगी ॥ २ ॥ उत्तर ॥ यह नियम नहीं है कि जो कार्य होता हे सो कारणको नाझ नहीं करता किन्तु करता हे जेसे कपूर ओर अग्नि इन दोनोंका जो संबन्ध सो है काय्ये ओर कपूर है कारण जेसे कपूर ओर अग्रिका संबंधरूप जो काय्यें सो कपूरको नाश कर देता है किचित् मात्रभी रहने नहीं देता इसी तरह अन्तःकरणकी जो ब्रह्माकार वृत्ति सो अविद्याक्रो नाश करती हे इसलिये अन्तःकरणकी नो ब्ह्माकार वृत्ति उसीको ज्ञान कहते हैं ॥ २॥ शंका ॥ आपने पूर्व जो कहा कि साधनों करके संपत्न जो पुरुष हें तिनके वास्ते मोक्ष साधन रूप जो ज्ञान तिसको कहता हूं इससे यह सिद्ध हुआ कि साधन ज्ञानका कारण है ओर साधन हे अनित्य क्योंकि अनुछानके बाद साधनोंकी प्रतीति होती नहीं इसलिये साबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

६ तलवबोध-टीक: । धन अनित्य हे ओर साधन अनित्य होनेसे साधनोंसे सिद्ध हुआ जो ज्ञान सोभी अनित्य होगा क्योंकि जेसा। कारण होता है वेसाही काय्ये होता हे इस तरह कारणरूप साधन अनित्य होनेसे कार्यरूप ज्ञानभी अनित्य होगा इसलिये अनित्य ज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छाही निष्फूठ है ओर साधनसंपन्न होनाभी निष्फल है ॥ ३ ॥ उत्तर॥क्राय्यं कारणरूप तो होता है परंतु निमित्त कारणरूप नहीं होता किन्तु उपादान कारणरूप होता है जेसे घटका निमित्त कारण कुम्हार ओर उपादान का: रण मृत्तिका हे जेसे घट उपादानकारण मृत्तिकारूप हे निर्मित्त कारण कुम्हाररूप नहीं इसी प्रकार साधन ज्ञानका निमित्त कारण है ओर बुद्धि सहित आभाप्त ज्ञानका उपादान कारण है इसवरास्ते ज्ञान निमित्त कारण साधन रूप नहीं किन्तु उपादान कारण आभासरूप है॥ ओर आभास है चेतन्ृय ओर नित्य तो फिर ज्ञान किस युक्तिसे जनित्य पिद्ध हो सकता हे किन्तु ज्ञान नित्य हे ओर नित्य ज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छाभी सफल है ओर साधनसंपन्न होनाभी सफल है॥ ३ ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेकरानन्दप्रकाशिका । ७ शंका ॥ काये भलेही उपादान कारणहूय हो परंतु काये अनित्य होता है जेत्ते घट बेशक उपादान कारग पृत्तिकारूप हे परंतु घट नाशतान तो हे ॥ इसी प्रकार ज्ञान उपादान कारण जआभाप्त चेतन्य रूप भलेही हो परंतु ज्ञान नाशवान् हे क्योंकि जो कार्य होता हे सो सप नागझवान होता है॥ ४ ॥ उत्तर | वो काये नाझगान होता हे कि जो कारणसे विलक्षणरूप करिके कुछ कालतक स्थिति रहता है जेसे घट मृत्तिकराते विलक्षणहूव करके स्थित होता है इसलिये वह नाशवाव है और यहांपर तो ज्ञातके हेतेही काय्येकारण भाव अथात् ज्ञाता ज्ञेय ज्ञान भाव निवृत्त हो जाता है क्योंकि ज्ञाताभो आत्मा हे आर ज्ञेयभी आत्मा है जब कि ज्ञाताभी आत्मा ओर ज्ञेयभी आत्मा तो फिर ज्ञान कुछ दूसरी वस्तु नहीं किन्तु ज्ञानभी आत्माही हे ओर आत्मा हे शुद्ध सचिदानंदस्परूप इस लिये ज्ञानभी शुद्ध सच्निदानंदस्वरूप है ॥ तो फिर साधन अनित्य होनेसें ज्ञान अनित्य नहीं हो उकता ओर वास्तवमें तो ज्ञानकों कारणकी अपेक्षादी बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

८ तेत्वबोध-दीका । नहीं क्योंकि आत्मा ज्ञानस्वरूप है॥ केवल इतनाही है कि जैसे वद्ध स्वयंही सफेद्रूप हे परंतु मठके संबन्धसे उसकी सफदी मालूम नहीं होती ओर मसालेकरिके मल दूर होनेसे सुफेदी स्वयंही प्रगट हो जाती हे इसलिये मसालेकी आवश्यकता हे ॥ इसी प्रकार आत्मा ज्ञानस्वरूप हे परंतु अविया करके अज्ञानी प्रतीत होता हे ओर अविद्याका नाश विवेकादिक साधनोंसे होता हे इसलिये साधनोंकी अवश्य अपेक्षा हे वे साधन ये हें तिनकों श्रवण करो ॥ ४ ॥ २॥ ॥ अथ चार साधन वर्णन ॥ साधनचतुष्टय कम ॥ नित्यानत्यव स्तुविविकः ॥ १॥ इहासुन्राथफलभोगविरागः॥ २॥ शमादिषटूसंपत्तिः ॥ ३ ॥ मुमक्षुतं् चेति ॥ ४ ॥ ३ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ साधन चार कोनसे हैं सो कहो ॥ उत्तर॥ नित्य ओर अनित्य वरतुका जो यथावत ज्ञान तिसकों विवेक कहते हैं वही प्रथम साधन है॥१॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शैकरानन्दपकाशिका । ९ ओर नित्यानित्य वस्तुका विचार होकर अनित्य जो इस लोक ओर परलोकके भोग तिनके त्यागकों विराग कहते हैं यह दूसरा साधन है ॥ २॥ ओर शामसें आदि लेकर जो पट संपत्ति है यह तीसरा साधन हे ॥ ३ ॥ ओर मुमक्षुता यह चोथा साधन है ॥ ४ ॥ ३॥ ॥ अथ विवेक वर्णन ॥ नित्यानित्यवस्तुविवेकः कः ॥ नित्यवस्तवेकं ब्रह्म तद्व्गतिरिक्त सर्वमनित्यम॥ अयमेव नित्यानित्यवस्तुविवेकः॥ ४॥ टीका॥ प्रश्न ॥ नित्य ओर अनित्य वस्तुका जो ज्ञान सां क्या हैं ॥ उत्तर ॥ शुद्ध सचिदानंदस्वरूप जो एक ब्रह्म हे सोई तो नित्य है ओर तिससे जो व्यतिरिक्त हृश्य प्रपंच अथात संसार सो सब अनित्य हे क्यों कि संसार मनका संकल्पमात्रही है वास्तव संसार कुछ वस्तु नहीं है ऐसे हृढ ज्ञानकों विषेक कहते हैं ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 प्रश्न ॥ बेदमें तथा अन्य झात्रोंमें ओर पुराणोंमेंभी | 40
पल... हे परमात्मासें संसारकी उत्पत्ति ऋषियोंनें लिखी है तो फिर आप संसारको मनका संकल्पमात्र केसे कहते हो ॥ [4 ली औी आम... उत्तर ॥ जहांपर ऋषियोंने संसारकी उत्पात्ति परमात्मासे लिखी है सो वहांपर रोचक भयानक वाक्योंके अधिकारियोंके वास्ते लिखी है किन्तु यथार्थ नहीं है ॥ प्रश्ष ॥ रोचक भयानक यथार्थ वाक्य कोनसे हैं सो कहो ॥ उत्तर ॥ रोचक नाम टोभक़ा है ओर भयानक नाम भयका है ओर यथार्थ नाम ठीकठीकका है ॥ दृश्ान्त ॥ जेसे किसी वालकके दझरीरमें बहुतसी फुनर्सी हो गई तिस बालकको दुःखी देखकर तिसकी मातानें नीम अर्थात् ओषधी उसको पिछाना चाहा परंतु उस बालकनें उसको कटु जानकर नहीं पिया तब उसकी मातानें उसको ठोभ दिया कि इस ओषधीकों तुम पीलोंगे तो में तुमकों मीठा दूंगी परंतु मीठेके देनेंसें उसकी बिमारी बहुत बढ़ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानस्द्प्कारी का । ११ जाती इतलिये उसकी माताका मीठा देनेका तात्पय्ये नहीं था ओर न वहां मीठा था परंतु ओषधी पिछाकर उसकी फुताप्तियोंकों दूर करनेंसेही तात्पय्ये था ओर जिस बालकने लोभतें उत्त ओपधीकों नहीं पिया तब उरुको भय दिया कि इस ओपषधीकों तुम न पिझोगे तो तुमको हठ आयकर ठेगा इस वक्‍्यके कहनेकभी यह तात्पय्य नहीं था कि मेरे बालकक्‍ों हु आयर ले किन्तु भय देके ओपधी पिलाकर उसकी फुत सियोंकों दूर करनेंसेही तात्पय्ये था ओर जब उसकी मातानें ऐसा देखा कि यह बालक आपिर्धीके गुनकोी जानता हे तब उसके वास्ते रोचक भयानक अर्थात्‌ ठोम ओर भय देनेका कुछभी प्रयोजन न रहा किन्तु यथाथ वाक्यही कहां कि इस ओषधीके पीनेसे तुमारी सब फुतरत्ती जाती रहेंगी इसी प्रकार बाठ्ुकरूपी पुरुषोकों दुःखरूप फुनासि यों करिके दुःखी देखकर मातारूप ऋषियोंने भगवषत अराधन रूप ओपधी पिलाकर तःखरूप फुनसियोंको नाश करना चाहा परंतु बालक रूप पुरुषोंनें कठिन जानकर नहीं ग्रहण किया तब माताबांदप्रातवतना7080609ात्‍ा।.८एा

१२ तत्वबीध-दीका । रूप ऋषियोंनें रोचक भयानक शब्द उनके वास्ते कहे कि वो परमात्मा सर्वशक्तिमान् ऐसा है कि जो सम्पूर्ण संसारकों उत्पन्न करता है ओर पालन करता हे ओर संहार करता है तिस सर्वश्क्तिमान परमात्माका घ्यान स्मरण करोगे तो वह परमात्मा तुमको स्वगांदि सुखोंका दाता होगा ओर हा तुम लोग उस परमात्माका ध्यान स्मरण नहीं करोगे तो वोही परमात्मा तुमकों महान घोर नरकमें डारेगा इन रोचक भयानक वाक्योका यह तात्पय्थ नहीं है कि परमात्मानेंही संसारको उत्पन्न किया है किन्तु सर्प शक्तिरूप लोभ दिखाकर भगवत् आराधन रूप ओपधी पिलाकर दुःखरूप फुनसियोंका नाश करनेसेही तात्पय्यें है क्योंकि जो उन ऋषियोंका यह अभिप्राय होता कि परमात्मानेही संता रको उत्पन्न किया है तो वोही ऋषि उन्ही अपने पं्थोमें ऐसा नहीं लिखते कि संसार स्वप्रकी तुल्य है अर्थात् मनका संकल्प मात्र हे वास्तव कुछ वस्तु नहीं है परंतु उत्तम अधिकारी अथौत् कम उपासनासे मलविक्षेप दोष बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्कारिका । १३ दूर हो गये हैं जिनके॥ तिनके वास्ते ऐसा लिखा हे कि संसार केवल मनका संकल्पमातजही हे वास्तव कुछ वस्तु नहीं ओर योगवाशिष्ठमेंभी श्रीरामचंद्रगीसं मुनिवर वृसिष्ठनीने यही उपदेश किया है कि हे रामचंद्र ! नो कुछ यह दृश्य प्रर्प ंच हे सो सब तेरे मनकाही संकल्प हे ओर वास्तव इसका उत्पन्न करनेवाटा कोई नहीं ओर श्रीशुकदेवजीकोंभी राजा जनकनें यही उपदेश किया है कि हे शुकदेत ! जो तेरे देखनें सुननेमें आता है सो सप तेरे चित्तहीसें उत्पन्न हुआ है ओर चित्तहीमें रुय हो जाता हे वास्तव कुछ वस्तु नहीं ओर इसको दृष्टि सष्ठे बापभी कहते हूँ ओर जो परमात्मासेही संसारकी उत्पत्ति मानें गे तो देश काल बिना कोई वस्तु उत्पन्न होती नहीं ओर परमात्मामें देशकालका अभाव है ओर जो यों कहो कि प्रथम देशकालको उत्पन्न करके संतारको उत्प न्न किया ऐसा कहनाभी बनता नहीं क्योंकि उप्त देश कालके उत्पन्न करनेंमेंभी दूसरे देश काठकी अपेक्षा हगी ओर उस देश कालक उत्पन्न करनेमें ओर देश कालकी अपेक्षा होगी इसी प्रकार अनवस्या दापष आने तंत्त। बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 रकी उत्पत्ति किसी युक्तिसेभी सिद्ध न होगी इससे यह सिद्ध हुआ कि संसार संकल्पमात्रही है ओर ब्रह्म सत्य है ऐसे दृढ ज्ञानको विवेक कहते हैं ओर यह साधन सर्वे साधनोंका मूल हैं ॥ ४ ॥ ॥ अथ विरागवर्णन॥ विरागः कः॥ इह स्वर्गभोगेषु च इच्छाराहित्यम ॥ ५ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ विराग किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ इस छोक ओर परलोकके नो भोग तिनकों मिथ्या ओर दुःखरूप जानकर तिनका त्याग करना तिसकों विराग कहते हूँ ॥ ५॥ प्रश्न॥ जिस करके इस छोकके भोग दुःखरूप होंवें तो अनेक पुरुष स्त्री पुत्र धन आदिके वास्ते अनेक प्रकारके यत्र करते हैं सो नहीं करना चाहिये ओर नो अनेक सजन पुरुष इस छोकके भोगेंको त्याग कर हठयोगादि क् अनेक क्रिया स्वरगंभोगोंके वास्ते करते हैं जिस करके स्वगेके भोग दुःखरूप होवें तो वो सलन पुरुष उनके
बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

वास्ते यत्न नहीं करे इससे यह सिद्ध हुआ कि इस लोक ओर परलोकके भोगोंमें दुःख सुख मिला हुआ हे क्योंकि भोग सघ नागावान हैं यह तो दुःख है ॥ ओर अनेक प्रकारके भोग भोगनेमें आते हैं यह सुख है इस प्रकार सुख दुःख मिश्रित होनेसे दुःख जानकर जो सुखको त्याग करे तो फिर सुख जानकर दुःखका ग्रहण क्यों ने कर ले क्यों कि जितना दुःख है उतनाही सुख हे ॥ उत्तर ॥ जेसे मीठेके बीचमें विष मिला हुआ हो तो उस मीठेके छोभसे विषका खाना किसी पुरुषकोभी स्वीकार नहीं किन्तु विषको देखकर मीठेकों सब पुरुष त्याग देते हैँ इसी प्रकार भोगेमिं सुख दुःख मिश्रित मानेंगे तोभी दुःखकों सुखके लोभसे कोईभी पुरुष स्वीकार नहीं करता किन्तु दुःखकों देखकर सुखका त्याग करना सब पुरुषोंको उचित है ओर वास्तवमें तो भोगेंमें सुखका लछेश मात्रभी नहीं किन्तु भोग दुःख रूप हें क्योंकि प्रथम तो भोगोंकी प्राप्तिके वास्ते अनेक प्रकारके यत्र क्रनेसे दुःख उठाने पड़ते हैँ ओर जब भोग प्राप्त होते हैं तव अपनेंसे अधिक भोगोंवाले

पुबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 रुपको देखकर ऐता दुःख होता हे कि हमनें ऐसे कर्म नहीं किये कि जिससे इनकी बराबर मेरेकोभी भोग प्राप्त होते ॥ ओर जो अपने बराबर भोगोंवाला हे तिसको देखकर ऐसा दुःख होता है कि हमारी बराबर ओरभी कोई दूसरा हे ॥ ओर जो अपनेंते न््यार। भोगोंवाठा है तिसको देखकर अहंकाररूप ऐसा दुःख होता है कि हमारे आगे तो यह कुछभी वस्तु नहीं ॥ ओर पुण्योंके क्षीण होने पश्चात् फिर जन्म मरण दुःख रूप संसारमें पडता हे इस लिये इस लोक ओर परलोकके भोग दुःखरूप हैं सुखकरा लेशमात्र भी नई इस वास्ते इस ठोक ओर परलोकके भोगोंको त्याग करना इसको विराग कहते हैं ॥ परंतु विराग दो प्रकारका होता हे एक दोष दृष्टिका, दूतरा मिथ्यालहाशिकरा॥ हृष्ंत ॥ एक पहाडके ऊपर गो चरानेवाढे ठडकनें शहरसे पीतल पत्नी छाकर एक घसिछाके ऊपर लगाके खेलते रहे जब कि वो छडके परको चले गये तब उसी वक्त उस पहाडके ऊपर एक मार्ग था उस मागेमें एक बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेंकरानन्दप्रकाशिका । १७ बेइय चला आया वह वेइय उस शिलठाको देखकर कहने लगा कि, इस स्वर्णकी शिलाको परमें ले चले तब बहुत धनवाले हो नॉयमगे परंतु बडा आश्चर्य हे कि उस वेरयने बहुतसा धन होनेकी अच्छा समझा मगर यह विचार नहीं किया कि जितना धन बंढेगा उतनाही दुःख बढ़ेगा लेसे किसी भंगीके पास बहुतसा रुपया बढ गया तब उस भंगीने दूसरे भंगीसे एक मुहछा पाखाने साफ करनेको उस रुपयेसे मोल ले लिया ओर अपनेकों पनवाला ओर बहुत बडा आदमी समझने लगा परंतु उसने यह विचार नहीं किया कि आगे तो एक सुहछेके पाखाने साफ करने पडते थे अब दो मुहछेके पाखाने साफ करने पडेंगे इसी प्रकार उस वेश्यने ऐसा विचार नहीं किया कि जितना धन बंढेगा उतनाही दुःख बढ़ेगा परंतु धनके ठोभसे उस शिलाको परमें ले नाना चाहा परंतु जब उसके थोडा समीप गया तब उरको ऐसा भय हुआ कि राजाको खबर हो जावेगी तो राजा हमको बहुत दूंड़ देगा ऐसी दोषहशिसि उसको त्याग कर चला बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

है तंखबो_--टीका आया अब पघंरमें आया तो जितना धन उसका था सब सोर ले गये तब उस वेश्यने ऐसा विचार किया कि राजिमें नाकर जब राजाको नहीं मालूम हो तब उसको घरमें ले आवे फिर वेसेही पनवाले हो जायेंगे जब वहां जाकर देखा तो वह पाषाणकी शिछ्ा लिकली देखकर पश्चात्ताप करने लगा जेसे उस वेश्यने उस शिलाको दोषहहिसे त्याग किया था इस लिये उस वेश्यको फिरभी उस शिलाकी इच्छा हुई इसी प्रकार नो पुरुष भोगोंकों दोपहशिसे अथांत् भोगोंमें दुःख नानकर त्याग करता है उस पुरुषको फिरभी भोगोंकी इच्छा होती हे ओर नो उन गो चरानेवाडे छडकोकी सब गो जाती रहे परंतु उनको ऐसी इच्छा कभी नहीं होगी कि उस शिलाकों परमें छाकर गो खरीद ढें क्योंकि उन्होंने उस शिलको मिथ्यात्वदृष्टिसे अथोत् पाषाण जानकर त्याग किया था॥ इसी प्रकार जो पुरुष भोगोंको मिथ्या जानकर त्याग करता है उसको फिर भोगोंकी इच्छा नहीं होती ओर भिथ्या जानकर त्याग करनेवाले पुरुषका पूर्ण विशग कहा नाता है॥ ओर भोगोंको मिथ्या जानना
विबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शकरानस्द्प्रकारिका । १९ रागका कारण है ॥ ओर मिथ्या जानकर त्याग करना विरागका स्वरूप है॥ ओर फिर उसका ग्रहण नहीं करना यह विरागका कार्य है ॥ इति विरागः ॥ ५ अथ शमादिषदूसम्पत्तिवणन । शमादिषट्सम्पत्तिः का । शमो दम उपरमस्तितिक्षा श्रद्धा समाधान चेति॥६॥ टीका ॥ प्रश्न॥ शमसे आदि लेकर पट सम्पत्ति कोनसी है ॥ उत्तर॥ हम १ दम २ उपरम ३ तितिक्षा ४ श्रद्धा ५ समाधान ६ इनको शमादिषट्सम्पत्ति कहते हैं ॥६॥ अथ शमवर्णन। शमः कः। मनोनिग्रहः ॥ ७॥ टीका ॥ प्रश्न॥ शाम किसको कहते हैं॥ उत्तर ॥ मनको विषयोंसे रोकना इसको शाम कहते हैं ॥ ि प्रश्न ॥ मन बहुत कालसे विषयोंको परमाप्रेय जानकर विषयोंमें आसक्त हो रहा हे तिसका विषयोंसे विरक्त बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 होना बहुत कठिन मालूम होता हे तिसके विषयोंसे विरक्त होनेकी कोनसी युक्ति हे सो कहो ॥ उत्तर ॥ मनका विषयोंसे विरक्त होना दो प्रकारसे है एक तो सच्छाश्नके विचारमें अभ्यास ओर दूसरे विराग ॥ दृष्हांत॥ कोई बालक मागेमेंसे अस्थिके ट्कडेको परम प्रिय जानकर अपनी छाती ठगा ठाया॥ जब परमें आया तव उसकी माताने उस बालकको कहा कि हे बेटा! इसको तू फेंक दे तब तो उसने ओर जोरसे पकड लिया तब उसको माताने उसको लू दिखाया तब उस बालकने लड्के देखतेही अस्थिको छोडकर लड्डुकी पकढ लिया ॥ इसी प्रकार मनरूपी बाटकने विषयरूपी अस्थिकोी परम प्रिय जानकर पकड़ रक्‍खा हे ओर मातारूप उद्धारकी इच्छावाला नो पुरुष ह सो उसने महात्माओंका सत्संग ओर भगवदाराधनरूप लड़ जब मनरूपी बालककों दिखाया तब उसी वक्त मनरूपी बालकने अस्थिरूप विषयोंकोी छोडकर सत्संग ओर भगवदाराधनरूप लड़को पकड़
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेकरानन्दपकाशिका । २१ लिया ॥ इस प्रकार महात्माओंका सत्संग करनेसे ओर निष्काम भगवदाराधन करनेसे ओर विरागसे मन विषयोंसे विशक्त होता है ओर मनके विषयोंसे विरक्त होनेकोही शम कहते हैं ॥ ७॥ अथ दमवणेन। दमः कः।| चक्षुरादिवाह्ेन्द्रियनिग्रहः॥ ८॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ दम किसको कहते है ॥ उत्तर ॥ चक्षुत्रे आदि लेकर जो वाद्य इन्द्रियें हैं तिनको शाब्दादि विषयोंसे रोकना तिष्षको दम कहते हैं॥ प्रश्न ॥ कानोंका स्वाभाविक धमम इब्दको सुननेका है ओर नेत्रोंका स्वाभाविक धर्म रूपको देखनेका हे इत्यादि ओर सर्व इन्द्रियोंके जो स्वाभाविक पर्म हैं तिनको ग्रहण नहीं करना अथोंत मूक होकर एकान्तमें बेठ सर्वे कियाको त्याग करना इसको दम कहते हैं या कुछ ओर॥ उत्तर ॥ जो पुरुष ऊपरसे तो विषयोंको त्याग देता है परंतु मनमें विषयोंकी इच्छा रखता है सो पुरुष जितेन्द्रिय नहीं कहा जाता ॥ किन्तु कृपटी कहां जाता बांदप्रातवतना7080609ि ता।.८एणा

 है ॥ इस लिये इन्द्रियें अपने अपने स्वाभाविक भमोंमें भलही ग्रवृत्त हों परंतु उनमें आसक्त नहोंना ओर अपनी सखुशीसे इन्द्रियोंकों विषयोमें प्रवृत्त नहीं करना इसको दम कहते है ॥ ओर इन्द्रियोंका विषयोंमें आसक्त हो जाना यही महान दुःखका हेतु हे ॥ दृशांत ॥ जिस मृगकी नाभीमें कस्तूरी होती है उस मृगको केवल कानही का विषय है इस लिये वधिक उसको शब्द सुनाकर मस्त कर लेता हे ओर मारकर उसकी नार्भीमेंसे कस्तृरी निकाल छेता है वो मग केवठ कानोंहीके विषयसे शरंरको त्याग देता है ॥ इसी प्रकार हस्ती स्पशके विषयसे पराधीन होकर अवस्थाभर दुःख पाता हे ॥ ओर पतंग नेत्रोंके विषयमें आसक्त होकर दीपकमें जल मरता है ॥ ओर मच्छी जिहाके विपषयमें आसक्त होकर कांटमें फसके मर जाती हे ॥ ओर भोंरा केवल नापि काके विषयमें आसक्त होके कमठमें मूँदकर शरीरको छोड देता हे इस प्रकार ये पाचों एक एक विषयमें भासक्त होकर झरीरको छोड देते हैं ओर महादुःखको पाते हैं परंतु यह मनुष्य तो इन्द्रियोंके पांचों
विषबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एए

शंकरानन्दप्रकारिका । २३ योंमें आसक्त हो जाता है तो फिर न जानें इसकी क्या दुदेशा होगी ॥ ओर श्रीकृष्णनीनेभी श्रीमद्भगवद्गीतामें लिखा हे कि हे अज्ञुन! इन्द्रियोंके जो विषय हें सो सब शीतोष्ण सुख दुःखके देनेवाले हैं ओर आदि अन्तवाले हैं अर्थात् मिथ्या दुःखरूप हें इसवास्ते बुद्धिवान पुरुष इनमें रमण नहीं करते॥ ओर नेसे कछुआ अपने सब अंगोंको अपनेहीमें समेट लेता हे तब निर्भय ओर सुखी हो जाता हे इसी प्रकार जो पुरुष अपनी इन्द्रियों को विषयोंसे अपनेद्दीमें समेट ठेता हे वह पुरुष निर्भय ओर सुखी हो जाता है इस वास्ते इन्द्रियोंकी विषयोंसे अवश्य निग्नह करना चाहिये ओर इन्द्रियोंकी विपयोंसे निग्रह करनेकोही दम कहते हैं ॥ ८ ॥ अथ उपरमवरणन। उपरमः कः। स्वधमालु छा नमेव ॥ ९॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ उपरम किसको कहते हें सो कहो ॥ उत्तर ॥ स्वधमका जो अनुष्ठान करना तिसको उपरम कहते हैं ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 प्रश्न।स्वधर्म कोनसा है कि जिसका अनुष्ठान किया जाय ॥ उत्तर ॥ स्वपर्म यह है कि मनुष्यशरीरकों पाकर विषयोंसे विरक्त होके मोक्षका उपाय करना क्योंकि मनुष्यशरीर मोक्षका द्वार है॥ अथोत मनुष्यदरीरमेंही मोक्षकी प्राप्ती होती है अन्य शरीरमें नहीं ॥ दृशांत ॥ जेपे कोई एक अंधा पुरुष किसी किलेमें घूम रहा था ओर वह शिरसे गंजाभी था परंतु वह ऐसा दुःखी होकर घूम रहा था कि उसको किलेके बाहिर निकलनेका रास्ता नहीं मिलता था मगर प्रारब्धवलसे कोई नेत्रोंवाला पुरुष आय प्राप्त हुआ तब उप्त अंधेने उससे कहा कि मेरको इस किलेके वाहिर निकालो तब नेत्रवाले पुरुषने उस अंधेका हाथ दिवालकी लगाकर कहा कि इस दिवालको हाथ लगाये ठगाये चछा जा जब दरवाजा आवेगा तब उस दरवाजे होकर किलेके बाहर निकल जाना परंतु दिवालसे हाथ नहीं हटाना इसी प्रकार वह अंधा चला आया मगर जब दरवाना आया बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 तब उसके शिरमें नो गंन था उस्त गंजको दोनों हाथोंसे खुजवाता गया ओर चलता गया इतनेहीमें दरवाना निकल गया तब फिर उसको उप्त किलेमें महान दुःखी होकर घूमना पडा इसी प्रकार जन्म मरणरूप किलेमें ज्ञानरुप नेत्रों करके हीन अथोत अंधे पुरुष घूम रहे हैं ओर महान दुःख पाते हैं परंतु उस जन्ममरणरूप किलेसे बाहर नहीं निकल सक्ते ओर किसीके प्रारब्धबसे ज्ञानरूपी नेत्रोंवाला गुरु आय प्राप्त हुआ तब उस गुरुने उस अंधेका शुभ कर्मरूपी दिवालकों हाथ लगाकर यह कहा कि इसी प्रकार चले जाना शुभकर्मरूप दिवालसे हाथ नहीं उठाना जब मनुष्यशरीररूप दरवाजा आवेगा तव जन्ममरणरूप किलेसे बाहर निकूल जाना इसी प्रकार वह अंधा चला आया परंतु जव मनुष्यशरीर रूप दरवाजा आया तब वह अंधा शुभकमेरूपी दिवालसे हाथ उठाकर दोनों हाथोंसे गंजको खुजवाने लगा अर्थात् विषयोंमें प्रवृत्त होकर मनुष्यशरीरूप दरवानेको निकाल दिया जब मनुष्यशरीर छूट बांदप्रातना7080609ातृा।.८एणा

२६ तत्तबीप-टीका । गया तब फिर जन्ममरणरूप किलेमें घूमकर दुःख पाना पडेगा ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि मनुष्य शरीर दुःखरूप किलेसे निवृत्त होकर परमानंद स्वरूप अपने आत्माकी प्राप्तिरुप मोक्षका दरवाजा है इसलिये मनुष्यशरीरका यही स्वधर्म है कि विषयोंसे निवृत्त होकर मीक्षका उपाय करना ओर ऐसे उपाय करनेकोही उपरम कहते हैं ॥ ९ ॥ .. अथतितिक्षावर्ण। तितिक्षा का । शीतोष्णसुखडुःखादिसहिष्णुत्वस॥ १०॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ तितिक्षा किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ शीतोष्ण सुखदुःख इनसे आदि लेकर भोर जो दंद् तिन सबको सहारना अर्थात् अभीष्ट वस्तुके प्राप्त होनेसे रागको नहीं प्राप्त होना ओर निक्ृश वस्तुक प्राप्त होनेसे द्रेषकों नहीं प्राप्त होना इसको तितिक्षा कहते हें ॥ प्रइन ॥ जो पुरुष शीतकाठमें जठकी पाराके नीचे बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । २७ बेठते हैं ओर उष्ण कालमें बहुतसी अग्निसे तापते हैं इत्यादि ओर अनेक प्रकारकी काष्टा करते हें इसीको तितिक्षा कहते हैं या कुछ ओर ॥ उत्तर ॥ जो पुरुष शीतकालमें नठकी धाराके नीचे बेठते हैं इत्यादि ओर बहुतसी काष्टा करते हैं ॥ वह पुरुष कुछ अपने उद्धारके वास्ते नहीं करते किन्तु ऋद्धि सिद्धिरुप बंधनमें फँसनेके वास्ते करते हैं क्यों कि जो पुरुष उद्धारके वास्ते करते हैँ वह ऐसी तिति क्षा करते हैं ॥ कि जेसा कुछ स्वाभाषिक सुखदुःख आय प्राप्त हो उसको सहारना ओर सच्छाब्चका विचार करना ओर श्रीमुरुके चरणोंका ध्यान करना वह पुरुष ऐसी तितिक्षा करते हैं ओर वह पुरुष ऋद्धि सिद्धियोंको पेरकी ठोकरसे उडा देते हैं ॥ क्योंकि वह पुरुष जानते हैं कि परम पदका जो अधिकारी होता है उसको गिराकर दुःख देनेके वास्तेनेक प्रकारकी उपाधि आय प्राप्त होती हे तिसमें ॥ दृष्ांत॥ जेते किसी किलेके बीचमें वहुतसे घोड़े बांधे रहे थे और कोई राजा उस बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

२८ तलबोध-दीका । किलेको दूटकर घोडोंकों मारनेके वास्ते आया ॥ उसने अपनी तोपें चलाना शुरू किया तब उन तोषोंको सुनकर घोडोंने विचार किया कि इप्त क्रिलेसे निकल जॉयगे तो बचेंगे नहीं तो मारे जाँयगे तब उनमेंसे एक घोडा अगार्डी पिछाडीको तोडकर दिवालकों फॉदके ओर खाईको फांदकर किलेसे बाहर निकलके निर्भय सुखी हो गया ओर एक घोडेने अग्राडी पिछाड़ीको तोडकर दिवालको फांदके खाईंमें गिर पडा ओर एक घोड़ा अगाडी पिछाडीको तोड़कर दिवालके ऊपर आधा इधर आधा उधर टंगा रहा ओर एक पोडा अगाडी पिछाडीको तोडकर किलेमेंदी ध्रमता रहा ओर एक पोडेने अगाडी तो तोड ली परंतु पिछाडी नहीं टूटी ओर बहुतसे घोड़े कानोंको खड़े कर करके सुनते तो रहे कि हमारा शत हमारे मारनेको तोप चलाता है परंतु अगाडी पिछाडीकों तोडकर किलेसे बाहर निकलनेको समर्थ नहीं हुए ॥ इसी प्रकार संसाररूप किलेमें पुरुषरूप घोड़े बहुतसे बंघ रहे हैं ॥ उनके मारबांदप्रातवतना7080609ाता्ा।.८एा

 नेकी कालरूपी राजा तोप चलाता है ॥ अथोत् दिखाता है कि जेसे ओर पुरुषोंको मारता हूं ऐसेही तुमकोभी मारूंगा कोई कोई पुरुष ऐसी तोपोंकी सुनकर श्री पुत्र ओर जाति आश्रम रूप अगाडी पिछाडीको तोडके विषयरूपी दिवालको फांदकर ओर ऋद्धि सिद्धिरूप खाइको त्यागके निर्भय हो गये॥ अथोत् दुःखरूप संसारसे निवृत्त होकर परमानंदस्वरूप अपने आत्माको प्राप्त हुए ओर कोई पुरुष जाति आश्रमरूप अगाडी पिछाडीको तोडके विषयरूपी दिवालको फांदके ऋद्धि सिद्धिरूप खाईमें गिरकर मारे जाते हैं॥ ओर कोई पुरुष जाति आश्रमरूप अगाडी पिछाडीको तोडकर विषयरूपी दिवालके ऊपर आधे इधर आधे उधर टंगकर मारे जाते हैं॥ओर कोई पुरुष जाति आश्रमरूप अगाडी पिछाडको तोडकर संसाररूप किलेहीमें देशान्तरोंके सेल करते २ मारे जाते हैं॥ ओर किसी पुरुपोने श्री पुत्र ब्राह्मण शूद्र भावरूप अगाडी तो तोड़ दी परंतु संन्‍्यासी ब्रह्मचारी ओर शिष्य सेवकभावरूप बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एए

 पिछाडी नहीं टूटी वह इसी प्रकार बंधे बंधे मारे जाते हैं॥ ओर गृहस्थ लोग देखते तो हें कि जेसे कार सबका ग्रास करता है॥ इसी प्रकार हमाराभी ग्रास करेगा ॥ परंतु सवे उपाधिको त्यागकर किलेसे निकलकरके निर्भय होनेका यत्र नहीं करते ॥ इससे यह सिद्ध हुभा कि परमपदको पानेवाले पुरुष सर्वे उपाधिकों त्याग करते हं॥ ओर जो पुरुष शीतकालमें जर्थारा आदि अनेक प्रकारकी काष्ठा करते हैं ॥ सो उद्धारके वास्ते नहीं करते किन्तु ऋद्धि सिद्धिरुप उपाधिमें फसनेके वास्ते करते हैं ॥ ओर जो पुरुष अपने उद्धारके वास्ते करते हैं वह ऐसी तितिक्षा करते हैं कि स्वाभाविक जो कुछ सुख दुःख आय प्राप्त हो उसको सहारना॥ ओर सच्छान्नका विचार करना ॥ ओर श्रीमुरुके चरणांका ध्यान करना ॥ वह पुरुष ऐसी तितिक्षा करते हैं ॥ ओर यही तितिक्षा कल्याणकी करनेवाली हें॥ इति तितिक्षा ॥ १० ॥

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एए

शंकरानन्दप्रकाशिका । द ११ अथ श्रद्धावर्णन । अद्धा कीदशी । गुरुवेदांतवाक्यादिषु विश्वासः श्रद्धा ॥ ११॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ श्रद्धा किसको कहते हें ॥ उत्तर ॥ गुरु ओर वेदान्त वाक्य इनको मोक्षका हेतु जानकर इनमें विश्वास करना ॥ अथोत् गुरु ओर वेदांत वाक्योसेही दुःखरूप संसारकी निवृत्ति ओर परमानंदस्वरूप अपने आत्माकी प्राप्ति होती है ॥ ऐसे विश्वासका नाम श्रद्धा है ॥ शंका॥आपने प्रथम कहा है कि संसार मिथ्या हे ॥ ओर गुरु वेदांतवाक्यभी संसारमेंही हें ॥ इस वास्ते वहभी मिथ्या है ॥ तो फिर गुरु वेदांतवाक्य मिथ्या होनेसे मिथ्या संसारकी निवृत्ति केसे कर सकते हैं ॥ उत्तरा।|गुरु वेदांतवाक्य भलेही मिथ्या हो परंतु तिनहीं वाक्योंकरके मिथ्या संसारकी निवृत्ति होती है॥ क्यों कि जो पदार्थ आपसमें सब सत्तावाले होते हैं ॥ वेही आपसम्में सापक ओर बाघक होते हैँ ॥ सो सत्ता तीन प्रकारकी है ॥ एक पारमाथिक सत्ता, दूसरी व्यवह्ारेक बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 सत्ता है॥ ओर तीसरी प्रातिभासिक सत्ता है॥ ओर पारमाथिक सत्ता तो चेतन्यमें हे ॥ ओर चेतन्यसे भिन्न जो पदाथ हैं तिनमें दो सत्ता हें ॥ जिसका ब्रह्मज्ञानसेही नाग हो विना बह्मज्ञानके न हो तिसमें व्यवहारिक सत्ता है॥ ओर जिसका ब्रह्मज्ञानससे विनाही नाश हो नेसे रज्जुमें सर्प, शुक्तिमें रजत इत्यादि ओर जिनका विनाही अक्नज्ञानके नाश हो जेसे रज्ज़के ज्ञानसे सपेका नाश ओर सिप्पीके ज्ञानसे चांदीका नाश विनाही ब्रक्नज्ञानके हे॥ इस लिये इनमें प्रातिभासिकसत्ता हे परंतु इनमें यह नेम हे कि जो पदार्थ आपसमें समसत्तावाले होते हैँ॥ वही आपसमें साधक ओर बाघक होते हैं ॥ विषमसत्तावाले नहीं मेसे काप्ठ ओर अग्नि इन दोनों की आपसमें व्यवहारिक समसत्ता है॥ इसलिये अग्नि काष्ठका बाधक है॥ओर जेसे मत्तिका ओर पटकी आपसमें व्यवहारिक समसत्ता है॥ इसलिये मृत्तिका घटका साधक है ओर जेसे मृगत ग्णाके नलकी देखकर प्यासा मृग भागता हे॥ परंतु वह जल उस प्यासका बाधक नहीं ॥ क्योंकि उस प्यासकी तो व्यवहारिक सत्ता है ओर उस जढकी प्रातिभासिक बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ३३ पत्ता है ॥ इसलिये विषम सत्ता होनेसे मृगतृष्णाका नल मृगकी प्यासका बाधक नहीं॥ ओर जेसे कोई चकवत्ती राजा स्वप्नमें दरिद्री होकर घर घर भीक मांगनेको गया ॥ परंतु जहां जाय वही उप्तकी अप्रतिष्ठा हो॥ अथोत् सम्पूर्ण पुरुष उसका अपमान करने लगे उस अपमानको देखकर जब वह बहुत दुःखी हुआ तब ऐसा देखता है कि एक नगरका राजा मर गया था उस नगरमें थह नेम था कि जो कोइ पुरुष प्रातःकाल शहरमें आगे उप्तको राज्य दिया जायगा।॥ उसी रोज वह राजा स्वप्नम दरिद्री हुआ हुआ प्रातःकाल उस शहरमें चला गया तभी उसको राज्य प्राप्त ही गया॥ उस राज्यके प्राप्त होतेही वह अप्रातिष्ठा करनंवाले पुरुष हाथ जोडकर सेवामें आय प्राप्त हुए अब देखिये कि सत्य चक्रवर्त्ती राज्य मिथ्या द्रिद्रताका बाधक ओर मिथ्या प्रतिशका साधक नहीं हुआ ओर मभिथ्याही राज्य मिथ्या दरिद्रताका बाधक ओर मिथ्या प्रतिष्ठाका साधक हुआ इससे यह पिद्ध हुआ कि मिथ्याहीसे बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

 मिथ्याकी निवत्ति होती हे॥ इसी प्रकार गुरु वेदांतवाक्य भलेही मिथ्या हो परंतु उनी वाक्यों करके मिथ्या संसारकी निवृत्ति होती है॥ इसलिये दुःखरूप संसारकी निवृत्ति करनेवाले जानकर गुरु वेदांतवाक्योंमें विश्वास करना इसको श्रद्धा कहते हैं ॥ १ १॥ अथ समाधानवण्णन। समाधान किम । चित्तेकाग्रता ॥ १२॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ समाधान किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ चित्तकों एकाग्र करना अथात्॥ शाम ॥ दम ॥ उपरम ॥ तितिक्षा ॥ श्रद्धा ॥ इन सब साधनोंको उद्धारका हेतु जानकर इनको धारण करना क्योंकि केवल सुनने सुनानेसे कल्याण नहीं होता जेसे कोई पुरुप निश्चय कर ले कि विपके खानेसे मृत्यु होती है ॥ ओर विषको लेकर अपने पासभी रख ले परंतु जबतक विषको नहीं खायगा तबतक कभी नहीं मरेगा ॥ इसी प्रकार भलेही सुन ले कि यह साधन मोक्षका हेतु है ॥ ओर सुनकर यादभी कर ले परंतु नवृतक धारण बांदप्रातवाना7080609ात्रा।.८एा

 नहीं करेगा तबतक कल्याण नहीं होगा इसलिये इन शब्दोंकी सुनकर धारण करना इसको समाधान कहते हें शंका ॥ जेसे मल्यागिरिके समीप रहनेवाले वृक्ष चाहे मलयागिरिकी सुगंधीको धारण करे चाहे नहीं करे परंतु वह सब वृक्ष चंदनरूप हो जाते हैं इसी प्रकार महात्माओंके समीप रहनेवाले पुरुष उनके वाक्योंकों सुनकर धारण करे या नहीं करे परंतु वह सब महात्मा ही हो जाते हें ॥ उत्तर ॥ मलुयागिरिके समीप रहनेवाले वृक्ष सबही चंदन हो जाते हैं ॥ इसमें तो संदेह नहीं परंतु वाँसमें सुगंधी कभी नहीं होती क्योंकि उसमें तीन दोष हैं ॥ एक तो बहुत लम्बा होता है ॥ दूसरे उसमें गांठें बहुतसी होती हैं ॥ तीसरे बीचमेंसे पोला होता है॥ इसलिये मलयागिरिके सत्संगका फल उसको नहीं प्राप्त होता ॥ इसी प्रकार महात्माओंके समीप रहनेवाले पुरुष सभी महात्मा हो जाते हैं॥परंतु वॉसकी तरह तीबांदप्रातना7080609ाता।.८एणा

३६ तत्वबोध-टीका । न दोष जिस पुरुषमें हें तिम्तको सत्संगका फल नहीं प्राप्त होता ॥ एक तो अहंकार रूप ठम्बाई है जिसमें॥ ओर दूसरे कपटरूप गांठि जिसके हृदयमें हे ॥ अर्थात् बाहिर कुछ ओर भीतर कुछ॥ तीसरे पोला है ॥ अथीत् इस कानमें शब्द सुना ओर उस कानमें होकर निकाल दिया ॥ किन्तु घारण नहीं किया यह तीन दोष जिस पुरुषम है. ॥ तिस पुरुषका महात्माआके सत्सगका फूल नहीं प्राप्त होता क्योंकि सुनकर धारण तो करतेही नही तो फिर श्व्ांति केसे हो ॥ जेसे कोई पुरुष जान ले कि मीठेके खानेसे मुंह मीठा होता है ॥ ओर मीठा मीठा कहताभी रहे ॥ परंतु जबतक मीठा नहीं खावेगा तबतक झुंह मीठा नहीं होगा ॥ इसी प्रकार भलेही वेदांतवाक्योंकोी सुनते सुनाते रहो ॥ परंतु जबतक यथावत् धारणा नहीं होगी तबतक कल्याण नहीं होगा ॥ इसलिये वेदांतवाक्योंसे चित्तकों एकाग्र करना इसको समाधान कहते हैं ॥ ओर हाम दम उपरम तितिक्षा श्रद्धा समाधान ये पद्सम्पत्ति ज्ञानका तीसरा साधन है॥ १२॥ बांदप्रातवतना7080609ाता.८एा

शंकरानन्दप्रकारिका । ३७ अथ् मुमक्षतावर्णन । मुमक्ष्त किम । मोक्षों में भूयादितीच्छा ॥ १३॥ टीका ॥प्रश्न। मुमुक्षुता किसको कहते हैं सौं कहो ॥ उत्तर ॥ मेरी मोक्ष हो ऐसी इच्छाका नाम सुमुश्लुता है ॥ प्रश्न ॥ मोक्षका क्या स्वरूप हे सो कहो ॥ उत्तर ॥ कारणसहित संसारकी निवृत्ति ओर परमानंदकी प्राप्ति मोक्षका स्वरूप है ॥ शंका ॥ कारणसहित संसारकी निवृत्ति तो अभाव: रूप है ओर परमानंदकी प्राप्ति भावरूप है ॥ तो फिर भावरूपता ओर अभावरूपता एक मोक्ष विषे केसे बन सक्ती हे ॥ . उत्तर॥ जेसे एक रणज्जू विषे सपेकी निवृत्ति तो अभावरूप है॥ ओर रण्जूका ज्ञान भाषरूप है ॥ जिस प्रकार यह दोनों भावरूपता ओर अभावरूपता एक रज्ज़ विषे बनती हैं ॥ इसी प्रकार कारणसहित संसारबांदप्रातवना7080609ित्ा।.८एा

३८ तरवबोध-दीका । की निवृत्ति अभावरूप ओर परमानंदकी प्राप्ति भावरूप एक मोक्ष विषे बनती है ॥ ओर वास्तवमें तो अभावरूपता भावरूपही है॥ क्योंकि चाह तो सर्पकी निवृत्ति कहो ओर चाहे रज्जूका ज्ञान कहो ओर चाहे दोनोंही कहो ॥ इन सबका तात्पर्य एकही हे ॥ इसी प्रकार चाहे कारणसहित संसारकी निवृत्ति कहो ओर चाहे परमानंदकी प्राप्ति कहो ॥ चाहे दोनोंही कहो इन सबका तात्पर्य्यें एक मोक्ष विषे है ॥ इसलिये कारणसहित संसारकी निवृत्ति ओर परमानंदकी प्राप्ति मोक्षका स्वरूप हे ओर इसकी इच्छाका नाम मुमुश्‍शुता है ॥ शंका ॥ मोक्षकी किसी पुरुषकोभी इच्छा नहीं क्योंकि प्रथम तों कारणसहित संसारकी निवृत्तिहीको कोई पुरुष नहीं चाहता॥ किन्तु कोई कोई पुरुष ॥ अध्यात्म ॥ अधिभूत ॥ अंधिदेव ॥ इन तीन दुःखोंकी १ श्‍शुधा पिपासा रोगादिकोंसे जो दुःख होता है ॥ २' व्याप्र सर्पादि करके जो दुःख होता है ॥ ३ यक्ष राक्षस प्रेतादि करके जो दुःख होता है ॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 निवृत्ति चाहते हैं तो ओषधी आदिकोंसे हो सक्ती हे ॥ परंतु कारणसहित संसारकी निवृत्तिकी किसी पुरुषकोभी इच्छा नहीं ओर दूसरे परमानंदकी प्राप्तिकी किसी पुरुषको इच्छा नहीं क्योंकि जिस वस्तुका प्रथम अनु भव ज्ञान होता हे उस वस्तुकी इच्छा होती हे ॥ ओर परमानंदका तो प्रथम अनुभपज्ञान हेही नहीं किसी पुरुषकोभी ॥ इसलिये परमानंदकी प्राप्तिकी किसी पुरुपको इच्छा नहीं ॥ किन्तु सर्वेपुरुष विषय सुखको चाहते हैं॥ परमसुखको कोई पुरुष नहीं चाहता ॥ इस वास्ते कारणसहित संसारकी निवृत्ति ओर परमानंदकी प्राप्तिरूप मोक्षकी किसी पुरुषको इच्छा नहीं ॥ उत्तर ॥ तुमने जो कहा कि कारणसाहित संसारकी निवृत्तिकी किसी पुरुषको इच्छा नहीं किन्तु कोई कोई पुरुष ॥ अध्यात्मादि दु:खोंका नाश चाहते हैं ॥ सो ओषधीआदिकोंसे निवृत्त हो सक्ते हें ॥ ऐसा कहना बनता नहीं क्योंकि बहुतसे दु:ख ऐसे असाध्य हैं कि जो ओषधियोंसेभी निवृत्त नहीं होते ॥ ओर जो निवृबांदप्रातवतना7080609िताा।.८एणा

 त्त हो जाते हें ॥ वह कुछकाऊ पीछे फिरभी उत्पन्न हो जाते हैं ओर सब पुरुष ऐसा चाहते हैं कि हमारा दु:ख ऐसा निवृत्त होगे कि जो फिर कभी उत्पन्न नहीं हो॥ अर्थात् अत्यंत निवृत्ति दु:खोंकी चाहते हैं ॥ परंतु दु:खोंकी अत्यन्त निवृत्ति तो तभी होगी कि जब कारणसहित संसारकी निवृत्ति होगी क्योंकि सर्व दु:खोंका मूल कारणसहित संसार है ॥ इसलिये कारणसहित संसारकी निवृत्तिकी सवे पुरुषोंको इच्छा हे ॥ ओर दूसरे जो तुमने कहा कि सर्व पुरुषोंकी विषयसुखकी इच्छा हे ॥ परम सुखकी नहीं ऐसा कहनाभी बनता नहीं ॥ क्‍्योंकि सर्व पुरुष विषयसुखको तो चाहते हैं ॥ परंतु ऐसा चाहते हैं कि ये हमारे सुख भोग कभी नाश नहीं हों ॥ अथोत् अविनाशी सुखको चाहते हैं ॥ ओर अविनाशी सुख तो परमानंदही है ॥ किन्तु विषयसुख तो सब नाशवान है इसवास्ते अविनाशी सुख जो परमानन्द् तिसकी प्राप्तिकी सब पुरुषोंकों इच्छा हे ॥ इससे यह सीद्ध हुआ कि कारणसहित संसारकी निवृत्ति ओर बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

शेकरानन्दप्रकाशिका । ४१ परमानंदकी प्राप्तिरुप मोक्षकी सर्व पुरुषोंको इच्छा है॥ ओर मोक्षकी इच्छाहीका नाम मुमुझ्षुता है॥ यह चोथा साधन है॥ ओर प्रथम विवेक ॥ दूसरे विराग ॥ तीसरे जश्ञमादिषद्र सम्पत्ति ॥ चोथे मुमुक्षुता ॥ ये चार साधन ज्ञानके हैं॥ १३॥ अथ तत्त्वविवेकका अधिकारिवर्णन | एतत्साधनचतुष्टयम्। ततस्तत्त्वविवेकस्याधिकारेणी भवति॥ १४ ॥ टीका ॥ ये चार साधन हें ॥ इन चार साधनोंके अनंतर अथांत् ॥ साधनोंकरके अन्तःकरण शुद्ध होनेसे पश्चात् जिज्ञासु तत्तविवेकका अधिकारी होता है ॥ प्रश्न ॥ अन्तःकरणमें कोन कोनसे दोष हैं ॥ ओर तिन दोषोंकी निवत्ति कोन कोनसे साधनोंसे होती हे सो कहो ॥ उत्तर ॥ अन्तःकरणमें तीन दोष हैं॥ प्रथम तो मल अथोत् पाप ॥ दूसरे विक्षेप अथोत् चंचलता ॥ तीसरे आवरण अथोंत् स्वस्वरूपका अज्ञान ॥ यह बांदप्रातवतना7080609ाता।.८ए

५२ ततबोध-टीका । मल विक्षेप आवरण तीन दोष हैं॥ इन तीनों दोषोंकी निवनत्तिके वास्ते तीन साधन हैं ॥ कमें॥ उपासना ॥ ज्ञान ॥ इन तीन साधनोंसे तीनों दोषोंकी निवृत्ति होती है ॥ अर्थात् निष्काम कर्म करनेसे मठ अर्थात् पापदोषकी निवृत्ति होती है ॥ ओर सो कमें चार प्रकारके हैं॥ एक नित्य कमे॥ दूसरे नेमित्तिक कम ॥ तीसरे काम्य कमे ॥ चोथे प्रायश्चित्त कमें ॥ ओर जिसके करनेसे तो पुण्य नहीं होय ओर नहीं करनेसे पाप हो तिसको नित्य कर्म कहते हैं ॥ जेसे शोच स्नान संध्या आदिक ओर जो किसी व्यवहारिक निमित्तको लेकर किया जाय तिसको नेमित्तिक कर्म कहते हैं ॥ ओर जो स्वगोदि भोगोंके वास्ते किये जाते हैं सो काम्य कर्म हैं॥ ओर जो अन्तःकरणकी शुद्धिके वास्ते किये जाते हैं॥ सो प्रायश्रित्त कमे हैं ॥ ये चार प्रकारके कम हैं ॥ इन चार प्रकारके कमेमेंसे नेमित्तिक कर्म तो करने योग्यही नहीं किसलिये कि जिस काय्यके निमित्तको छे[| कर कम किये जाते हैं॥ उस कर्मकी सिद्धि वा असिद्धि बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 तो प्रारब्धानुसार है ॥ क्योंकि बहुतसे पुरुष स्त्री पुत्र धन आदिकोंके वास्ते अनेक यत्न करते हें ॥ परंतु श्री पुत्रादिकी प्राप्ति नहीं होती तो फिर उनके निमित्त कर्म किये जाय तो अत्यंत मूखेता है ॥ ओर काम्यकर्मभी करने योग्य नहीं हैं ॥ क्योंकि जिन स्वगेभोगोंके वास्ते कर्म किये नाते हैं॥ सो स्वरगंभोग मिथ्या ओर दुःखरूप हैं॥ ओर दुःखको कोई पुरुष चाहता नहीं इसलिये काम्य कर्मोका करनाभी निष्फठ है ॥ और नित्यक्रम तो अवइय करनाही होगा क्योंकि संध्यादिक कर्म नहीं किये जांयगे तो पाप होगा॥ ओर जो प्रायश्‌ित्त कर्म हे सो अवश्य करने योग्य हैं॥ परंतु निष्काम किये जांयगे तो अन्तःकरणकी शुद्धिका हेतु होगा ओर सकाम किये जांयगे तो अन्तःकरणकी शुद्धिका हेतु नहीं होगा इसवास्ते निष्काम कर्मसे मल अथोत् पापदोषकी निवृत्ति होती है ॥ ओर शुद्ध सचिदानंद सवोन्तर्यामिरूप जो श्रीगुरु हैं॥ तिनके चरणकमलोंके ध्यानकों उपासना कहते हैं ॥ तिस उपासनासे विक्षेप बांदप्रातवनॉ7080609ाता।.८णा

 अथोत् चंचठताकी निवृत्ति होती हे ॥ ओर ज्ञानसे आवरणकी निवृत्ति होती हे ॥ इस प्रकार साधनोंसे अन्तःकरण शुद्ध होता है॥ सो साधन दो प्रकारके हैं ॥ एक तो वहिरंग ॥ दूसरे अन्तरंग ॥ जिस करके अन्तःकरण शुद्ध तो होय परंतु चिरकालमें होय तिसको बहिरंग साधन कहते हैँ ॥ ओर जिस करके बहुत शौत्रि अन्तःकरण शुद्ध हो तिसको अन्तरंग साधन कहते हैं॥ ओर कर्म उपासनासे अन्तःकरण शुद्ध तो होता है ॥ परंतु बहुत रोजमें होता है ॥ इसलिये कर्म उपासना बहिरंग साधन है॥ ओर विवेकादिक साधन अन््तरंग है ॥ क्योंकि उन करके अन्तःकरण बहुत शीघ्र शुद्ध होता है ॥ इसवास्ते विवेकादिक साधन अन्तरंग हैं ॥ ओर विवेकादिक साधनोंकी अपेक्षासे ॥ श्रवण॥ मनन ॥ निदिध्यासन ॥ ओर तत्त्वंपद श्ञोधन अथांत् साक्षात्कार ॥ ये चार साधन अन्तरंग हें॥ क्योंकि इनसे अन्तःकरण बहुत शीघ्र शुद्ध होता है ॥ किसलिये कि प्रथम तो अहंकारको त्यागकर श्रीगुरुके चरणोंमें जाके

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ५५ उनफे श्रीमुखसे वेदशास्त्रकों श्रवण करना वा पढना इसको श्रवण कहते हैं ॥ ओर दूसरे सवे उपाधिको त्यागकर एकान्तमें स्थित होके उन वाक्योंकी विचारना इसको मनन कहते हैं ॥ ओर उनको विचारके ५ हि ॥७ और) धारण करना इसको निदिष्यासन कहते हैँ ॥ ओर तत्वमसि आदि महावाक्योंसे जीवब्रह्मकी एकलाका निश्चय करना इसको तत्त्वंपद शोधन अथोत् साक्षात्कार कहते हैँ ॥ इन श्रवणादिक साधनोंसे अन्तःकरण बहुत शीघ्र शुद्ध होता है॥ इसवास्ते ये साधन अन्तरंग हें॥ इस प्रकार साधनों करके अन्तःकरण शुद्ध होनेके पशात् जिज्ञातु तत्त्वविवेकका अधिकारी होता है ॥१४॥ तत्तविवेकः कः। आत्मा सत्यस्तदन््यत् सबवे मिथ्येति ॥ १5५॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ तत्त्वविवेक किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ एक आत्माही सत्य हे ओर तिससे अन्य जो कुछ दृश्य प्रपंच अथोत् संसार है सो सब सगतृ ध्णांके जलकी नाई मिथ्या हे ॥ ओर जो कोई पुरुष
बांदप्रातना7080609ात््ा।.८एणा

५६ तत्बोध-दीका । उसको सत्य जानकर ग्रहण किया चाइता है सो उस पुरुषको मृगकी नाई प्राप्तमी नहीं होता ओर वह पुरुष महादुःख पाता है इसवास्ते इस संसारको मिथ्या ओर एक आत्माकों सत्य जानना इसकों तत्त्वविवेक कहते हैं ॥ १५ ॥ अथ आत्मासाक्षिरुपवर्णन । आत्मा कः। स्थल्सूक्ष्मकारणशरीराद्रयतिरेक्तः पंचकोशातीतः सन अवस्थात्रयसाक्षी सन्निदानंदस्वरूपः सन यस्तिष्ठति स आत्मा ॥१६॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ आत्मा किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ स्थूल सूक्ष्म कारण इन तीनों शरीरोंसे भिन्न ओर पंच कोशोंसे भिन्न ओर तीनों अवस्थाओं का साक्षी सच्चिदानंदस्वरूप सबको प्रकाश करनेवाला ओर सबसे न्यारा ॥ जेसे सुय्ये सबको प्रकाश करता है ओर सबसे न्यारा है॥ ओर जैसे सयंके प्रकाशकों बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७७ लेकर सब पुरुष अपनी अपनी क्रियाओंांके करनेमें ओर सुखदुःखके भोगनेमें प्रवृत्त होते हैं ॥ परंतु सूर्यमें कतेत्व भोक्ृत्व धरम नहीं हैं ॥ इसी प्रकार आत्माकी सत्ताकों लेकर देहेंद्रिय आदिक कम्मोके करनेमें ओर सुखदःखके भोगनेमें प्रवृत्त होते हैं ॥ परंतु आत्मामें कृतृत्व भोक्तत्वधमम नहीं किन्तु आत्मा शुद्ध है ॥ सबको प्रकाश करनेवाढा ओर सबसे न्यारा ऐसा जो है सो आत्मा हे ॥ १६॥ अथ स्थूलशरीरवर्णन । स्थलशरीरं किम्र।| पंचीकृतपंचमहाभते कृत सत्कम्जन्य सुखदुखाइभागा यतन शगरम आस्त जायत वधतावप रणमते अपक्षीयत वनरयतात पाईकारवदेतत्स्थल्शरीरम ॥ १७॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ स्थूल शरीर किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ पंचीकृत जो पंचमहाभूत हैं अथोत् पंची[6 9273408609 |.

४८ तबोध-टदीका । करण हुआ है॥जिन पंचमहाभूतोंका तिन करके किया हुआ ओर सत्करमों करके उत्पन्न हुआ हुआ अर्थात् मनुष्य स्थूलदरीर बड़े पुण्योंका फल है ॥ क्योंकि यह मनुष्यशरार मोक्षका द्वार हे ॥ ओर ऐसे मोक्षक्े द्वारकी अशुभ कममि प्रवृत्त करना पत्थरको हीरते तोलना है॥ ओर फिर केसा हे स्थूलशरीर कि सुसदःखादि नो भोग हैं ॥ तिनके र‍्नेका स्थान अथात् जिसमें स्थित होकर मन सुखदुःखोंकों भोक्ता हे ॥ और छेः विकार हूँ जिसमें ॥ अस्ति अर्थात् है ॥ जूते जन्मता है ॥ वद्धेते बढ़ता हे ॥ विपरिणमते श्रुवा अबवस्थाको प्राप्त होता है ॥ अपक्षीयते वृद्ध शवस्थाको प्राप्त होता है ॥ विननज्यति नाशगकों भाप्त होता है॥ ये छेः विकार हैं मिसमें तिसको रथूछ शरीर कहते हैं ॥ शंका ॥ आपने जो कहा कि स्थूल शरीरमें स्थित होकर मन सुखदुःखोंका भोक्ता हे ऐसा कहना बनता नहीं क्योंकि मन अविद्याका काये होनेसे नड हे ॥ इस बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 लिये यह सुखदुःखेंकि भोगनेमें समथे नहीं ओर दूघरे जैसे नेत्रोंके जो वस्तु अत्यन्त समीप होती है तिसको नेत्र विषय करते नहीं ओर जो वस्तु नेत्रोंके थोडी दूर होती है तिसको नेत्र विषय करते हैं॥ क्योंकि जेसे अंजन नेत्रोंके अत्यन्त समीप है ॥ इसलिये नेत्र अपने वीचके अंजनको नहीं देख सक्ते ॥ इसी प्रकार सुखदुःख मनके अत्यन्त समीप हैं ॥ इसलिये सुखदुःखको मन नहीं विषय करता ॥ किन्तु साक्षी जो जीवआत्मा है ॥ सोई सुखदुःखोंको विषय करता है ॥ अर्थात् मन नहीं सुखदुःखोंकी भोक्ता ॥ किन्तु जीवात्माही भोक्ता है ॥ उत्तर॥ जिस प्रकार तीन अवस्था है ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था इसी प्रकार जीवकी तीन संज्ञा हैं॥ विश्व तेजस प्राज्ञ जाग्रतमें वि ओर स्वप्रमें तेनस ओर सुघुप्तिमें प्राज्ञ नाम करके जीवआत्मा है॥ निसकर सुखदुःखका भोक्ता जीवात्मा हो तो सुधुश्तिमेंभी सुखदुःखकी प्रतीति होनी चाहिये सो होती नहीं ॥ क्योंकि

बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

७५० ततबोध-टीका । मन अपना कारण जो अविदया तिसमें रुय हो जाता है॥ अथात् तमरूप निद्रा करके आच्छादित हो जाता है॥ इसलिये सुषुप्तिमं सुखदुःखकी प्रतीति नहीं होती ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि भनही सुखदुःखका भोक्ता हें जीवात्मा नहीं ॥ केवल इतनाही है कि जेसे किसी पात्रम जल भरा हुआ हो ओर तिस जलमें सूर्यका आभास हो जेसे वायुके सम्बंधसे जल हिलता है॥ ओर उस जठके हिलनेसे आभास हिलता प्रतीत होता है ॥ वास्तव आभास अचल हे ॥ इसी प्रकार स्थूल शरीररूप पात्रमें सक्ष्मगरीर अथांत् मनरूप जल है तिस जलमें ब्रह्मूरप सूयंका जीवरूप आभास है ॥ ओर सुखदुःखरूपी वायु तो मनको लगती है ॥ परंतु मनके सम्बंधसे भ्रम करके जीवात्मामें प्रतीत होते हैं ॥ और वास्तव जीव शुद्ध है ॥ किन्तु मनही सुखदुःखको भोगता है ॥ ओर जिसमें स्थित होकर मन सुखदुःखोंको भोगता हे तिसकों स्थूल शरीर कहते हैं ॥ १७ ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 अथ सूक्ष्मशरीरवर्णन । सूक्ष्मशरार कस । अपचीकृतपंचमहाभतः कृत सत्कभजन्य सुखदुखाद भोगसाधन पंच ज्ञानेन्द्रियांण पंच कमन्द्रयाण पच आणादयः मनश्वक बाद्ध शका ण्व सतदरशकलाभः सह थात्त5 ति तत्सृश्मशरोरस ॥ १८ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ सूक्ष्म शरीर किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ अपंचीकृत जो पंच महाभूत हैं ॥ अथोत् पंचीकरण नहीं हुआ है जिनका तिन करके किया हुआ ओर सत्कर्म्मों करके किया हुआ॥ ओर सुखद खादि भोगोंका साधन ॥ ओर नेत्रसे आदि लेकर पंच ज्ञानइन्द्रियें हें ॥ जिसमें ओर वाक्यसे आदि ठेकर पंच कर्मइन्द्रियें हैं ॥ जिसमें ओर पंच प्राण हैं ॥ जिसमें ओर एक मन ओर एक बुद्धि इन सतरह कलाओंको सूक्ष्म शरीर कहते हैं॥ ओर इन सतरहोंमेंसे बुद्धिहीमें बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 चेतन्यका आभास प्रतीत होता है ॥ ओर किसीमें नहीं प्रतीत होता क्योंकि गेसे सम्पूर्ण पदार्थ नड और अ विद्याका काये हैं ॥ ओर सबमें सूयेका आभास पडता है ॥ परंतु दपेण आदि स्वच्छ पदाथमें सूयेके आभासकी प्रतीति होती है॥ ओर किसी पदाथेमें नहीं॥ इसी प्रकार चेतन्यका आभास सम्पूर्ण पदार्थोमें पडता है ॥ परंतु सम्पूणमें प्रतित नहीं होता ॥ केवल बुद्धि हीमें प्रतीत होता है ॥ क्योंकि बुद्धि स्वच्छ है ॥१८॥ अथ पचत्आनाद्रयवर्णन । औओजच् त्वक् चक्षु! रसना प्राणं इति पंच ज्ञानेन्द्रियाणि। श्रोत्रस्य दिग्देवता,त्वचो वाइः चक्षुपः सूयः, रसनाया वरुण; ब्रा णस्य आंश्वनो इति ज्ञानेन्द्रियदेवताः । आजस्य विषयः शब्दग्रहणम, तचा।वयपः स्पशग्रहणम,चक्षु पावषयः रूपप्रहणस, रसनाया| वषयः रसग्रहणमस, श्राणस्य विषयो गंधग्रहणम्र इति॥ १९॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ५४३ टीका ॥ प्रश्न ॥ पंचज्ञानेन्द्रियं कौनसी हैं ॥ ओर क्या उनका स्वभाव हे सो कहो ॥ उत्तर ॥ श्रोत्र त्वचा चश्लु रसना प्राण ये पांच ज्ञानेन्द्रियें हैं॥ ओनका देवता दश दिशा हैं ओर त्वचाका देवता वायु हे ओर चश्लुओंका देवता सूय्ये हे ओर रसनाका देवता वरुण हे ओर नासिकाका देवता अश्िनीकुमार हैं ॥ ये पांच ज्ञानेन्द्रियोंके देवता हैं ॥ ओर ओज्रका विषय राब्द हे ओर इब्दका ग्रहण करना यह श्रोत्रका स्वभाव है ओर त्वचाका विषय सरपशें है ओर स्पर्श अर्थात् सरदी गरमी ओर चिकने खरखरेका ग्रहण करना यह त्वचाका स्वभाव है ओर नेत्रका विषय रूप है और रूपका ग्रहण करना नेत्रोंका स्वभाव है ओर रसनाका विषय रस है ओर रसका ग्रहण करना रसनाका स्वभाव है ओर नासिकाका विषय गंध है ओर गंधका ग्रहण करना नासिकाका स्वभाव है॥ ये पांच ज्ञानेन्द्रियें अपने अपने विषयोंकोीं ग्रहण तो करती हैं ॥ परंतु अपने अपने देवताओंके सहित विषयोंको बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

५४ तसखबोष-टीका । अहण करती हैं ॥ किन्तु विना देवताके नहीं ग्रहण कर सक्तीं ॥ १९ ॥ अथ कमेद्रियवर्णन । वाक्पाणिपादपायूपस्थानीति पंच कमन्द्रियाणि । वाचो देवता वहिः, हस्तयारद्र पादयोवि ष्णु: पायाम्तत्ठ,,उपस्थस्य प्रजापतिः इति कमन्द्रियदेवताः ! वाचा विषपयः भापणस, पाण्यावषय बसस्ुतुग्रहणस: पादयावषयः गसनस,पायावषयः महत्यागः, उपस्थस्थ [वषयः आनढ् इंत ॥ २०॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ पांच कमन्द्रियें को । ओर क्या उनका स्वभाव है ॥ उत्तर ॥ वाक पाणि पाद पायु उपस्थ ये पांच कर्मेंद्रियें हैं॥ ओर वाकका देवता अग्नि ह ओर पाणि अथांत् हाथोंका दृवता इन्द्र हे ओर पाओंका देवता [८ 9273408609 |.

 विष्णु हे ओर गुदाका देवता मृत्यु है ओर लिगका देवता प्रजापति है॥ ओर वाणीका विषय शब्द है॥ओर दाब्दका उच्चारण करना वाणीका स्वभाव है ओर हाथोंका विषय वस्तु है॥ वस्तुका ग्रहण त्याग करना हाथोंका स्वभाव हे ओर पाओंका विषय मागें है मार्गका चलना पाओंका स्वभाव है ओर ग्रुदाका विषय मल है॥ मलका त्याग करना गुदाका स्वभाव है ॥ ओर लिगका विषय विषयानंद है ॥ ओर विषयानंदका ग्रहण करना लिगका स्वभाव है॥ ये पांच कर्मेन्द्रियें अपने अपने देवता आंके साहित [वषयोकां ग्रहण करती हैं॥ कन्तु विना देवताओंके विषयोंकी नहीं ग्रहण कर सक्ती ॥ २० ॥ अथ कारणशरारवणन ॥ कि कारणशरीरं किम अनिवाच्यानाथवियारुपं शरीरद्वयस्य कारणमात्र सत स्वस्वरूपाज्ञानं निर्विकल्पकरूपं यदस्ति तत्कारणशरीरम्॥ २१॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ कारण श्वरीर किसको कहते हैं ॥ बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

 उत्तर ॥ अनिवेचनीय अथात् सत् असतूसे विलक्षण क्योंकि सत् कहेंगे तो ज्ञानसे मायाका नाश नहीं होगा ओर जो असत कहें तो उसका काय्ये जो संसार है सो प्रत्यक्ष देखनेमें आता है ॥ इसलिये न सत् कह मक्ते हैं॥ ओर न असत् कह सक्ते हें ॥ अथोंत् सत् असतसे विलक्षण होनेसे अनिरवेचनीय है ओर अनिवेचनीय शब्दका वास्तव तात्पय्यें कारणसह्दित संसारके अत्यन्ताभाव विषय है ॥ क्योंकि जो सतभी नहीं ओर असत्‌भी नहीं तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं ओर मेरा यह कृथनभी कुछ नहीं ॥ अथोत केवल चेतन्यका विछास है॥ ओर वास्तव कथन श्रवण कुछ बनता नहीं इसलिये अनिवेचनीय है ओर फिर केसी हे माया कि अनादि अथोत् जिनको कारणकी अपेक्षा नहीं क्योंकि जो स्वपरका साधक होता है व दूसरेकी इच्छासे रहित होता है ॥ जेसे दीपक स्वपर दोनोंका साधक हे ॥ इस वास्ते वह दूसरे दीपककी इच्छासे रहित है ॥ अर्थात् अपने प्रकाश करके अपने स्वरूपकाभी बोध करता बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 हे ॥ ओर अन्य पदार्थोंकाभी बोध कराता हे ॥ इसबास्ते उस दीपकके देखनेकों दूसरे दीपककी इच्छा नहीं ओर जो उसके देखनेको दूसरा दीपक लाओगे तो उस दीपकके देखनेकी ओर दीपक लाना पडेगा॥ ओर फिर उस दीपकके देखनेकी ओर दीपक ठाना पड़ेगा इस प्रकार चक्रदोष आनेसे काय्ये सिद्ध नहीं होगा ॥ ओर इसी प्रकार माया स्वपरका साधक है ॥ क्योंकि अपनेही करके अपनाभी बोध कराती हे ॥ कि में माया हूं ॥ ओर अपनेही करके अपना जो काय्ये संसार तिसका बोध कराती है ॥ इसवास्ते मायाकों कारणकी अपेक्षा नहीं ओर जो इसका कोई कारण मानोगे तो उसका कोई ओर कारण मानना पड़ेगा ओर फिर उसका कोई ओर कारण मानना पडेगा इस प्रकार चक्रदोष आनेसे काय्ये सिद्ध नहीं होगा इसलिये माया अनादि हे ओर फिर केसी हे कि जिसको अनादि कहनेसेभी कारणसहित संसारके अत्यन्ताभाव विषे तात्पय्ये है ॥ क्योंकि अनादि शाब्दका यह अथे बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

५७८ तत्बोध-टीका । है जिसका आदि नहीं ओर जिसका आदि नहीं तो फिर उसका अन्तभी नहीं ओर जो आदि अन्त दोनों नहीं तो फिर मध्यमें क्या हे॥ अर्थात् कुछ नहीं इस प्रकार अनादि शब्दकाभी तात्पयं कारणसहित संसारके अत्यन्ताभाव विषय है इसलिये अनादि है ओर फिर केसी है कि अविद्यारूप अथात् ब्रह्मवियासे निवृत्ति होनेवाली ओर दोनों शरीरोंका कारणमात्र ओर स्वस्वरूपका अज्ञान अथात शुद्ध सचिदानद्स्वरूप अपने आत्मस्वरूपको भूठाकर जीवभावको प्राप्त करनेवाडी ओर कूल्पनासे रहित अर्थात् तमरूप निद्रा ऐसी जो हे ॥ तिसको कारणशरीर कहते हैं ॥ ओर वास्तव स्वरूप इसका एकही हे॥परंतु अनिवेचनीय होनेसे इसका नाम माया है ॥ ओर इसका उत्पन्न करनेवाला कोई नहीं इसवास्ते इसको अनादि शक्ति कहते हैं ॥ ओर ब्रह्मविदासे निवृत्त होती है ॥ इसवास्ते इसका नाम अविद्या है ॥ ओर सम्पूर्ण संसार इससे उत्पन्न होता हे इसवास्ते इसका नाम कारण है ओर स्वस्वरूपकों आच्छादित बांदप्रातवतना7080609ाता.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७९ करती हें ॥ इसवास्ते इसका नाम अज्ञान हे ॥ ओर सत् असतके विचारसे रहित है इसवास्ते इसको तमरूप निद्रा कहते हैं ॥ ओर ये सब नाम मायाहीके हें ॥ परंतु वास्तव स्वरूप इसका एकही है ॥ इति कारणग़रीरम ॥ अब ये तीन शरीर समाप्त हुये ॥ ओर अब तीन भवस्थाओंको कहता हूं ॥ २१ ॥ अथ तानअवस्थावणन। अवस्थात्रय कग्म | जाग्रत्खमसुषु त्यवस्थाः ॥ २२ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ अवस्था तीन कोनसी हैं सो कहो ॥ . उत्तर ॥ नाग्रत् खप्न सुषुप्ति ये तीन अवस्था हैं॥ ओर इन तीनों अवस्थाओंका साक्षी शुद्ध चेतन्य चतुर्थ अवस्था तुयेरूप हे ॥ ये तीन अवस्था हैं ॥२२॥ ३, अथ जाग्रदवस्थावर्णन।_ जाग्रदूवस्था का। ओत्रादिज्वानेद्रियेः शब्दादिविषयेश्व ज्ञायते इंते यत् सा बांदप्रातवाना7080609ात्रा।.८एा

६ ० तलबोध-टीका । जाग्रदवस्था । स्थलशरीराभिमानी आत्मा विश्व इत्युच्यते ॥ २३॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ जाग्रत् अवस्था कोनसी हे ॥ उत्तर॥ अवणसे आदि लेकर जो पांच ज्ञानेंद्रियें हें॥ अथात् श्रोत्र लक चक्षु ससना घ्राण इन पांच ज्ञानेंद्वियों करके शब्दादि जो विषय हैं ॥ अथोत् शब्द सपशे रूप रस गंध इन विषयोंकों इन्द्रिय ग्रहण करे अर्थात् कानों करके सुना जाय ओर नेत्रों करके देखा नाय इत्यादि ओर सब इन्द्रियें अपने अपने विषयोंको जिस समय ग्रहण करें उसको जाग्रत अवस्था कहते हैं॥ ओर तिस जाग्रत अवस्थामें स्थूल शरीर हे ॥ ओर तिस स्थूल शरीरव्यश्कि अभिमानी जीवात्मा विश्व नाम करके हे ॥ ओर वही आत्मा जाग्रत् अवस्था स्थूल शरीर समषश्ि का अभिमानी होनेसे इंश्वर आत्मा हे विराट हे नाम जिसका ॥ इसको जाग्रत अवस्था कहते हैं ॥ इस जाग्रतमें मनका नेत्रेंमें स्थान है ॥ २३ ॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका | "क। अथ स्वप्रावस्थावर्णन । स्वप्रावस्था केति चेत । ज्ञाग्रदवस्थायां यत् दृए्ट यच्छ्रुतं तज्जानितवासनया निद्रासमये यः प्रपंचः प्रतीयते सा स्वप्रावस्था। सृक्ष्मशरीराभिमानी आत्मा तैजस इत्युच्यते ॥ २४॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ स्वप्न अवस्था कोनसी है॥ तिसको कहो ॥ उत्तर ॥ जाग्रत् अपस्थामें जो देखी ओर नो सुनी वस्तु तिससे उत्पन्न हुई नो वासना सो वासना संस्कार रूप होकर अन्तःकरणमें स्थित रहती हे॥ ओर तिस वासना करके निद्रासमय विषे जो प्रपंच प्रतीत हो तिसको स्वप्रावस्था कहते हैं ॥ ओर तिसमें सूक्ष्म शरीर है तिस सूक्ष्म द्ारीर व्यष्टिका अभिमानी जीवात्मा हे॥ तेजस है नाम जिसका ॥ ओर वही जात्मा सूक्ष्म ज़रीर स्वप्न अवस्था समष्टि अभिमानी होनेसे ईथर बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

६२ तखबोध-दीका । सात्मा हे जिसका ओर हिरण्यगर्भ हे नाम जिसका ॥। ओर तिसको स्वप्रअवस्था कहते हैं ॥ उसमें मनका कंठमें स्थान है ॥ इति स्वप्रअवस्था ॥ शंका ॥ आपने जो कहा कि जाग्रत् अवस्थामें देखी ओर सुनी नो वस्तु तिसकी स्पप्नमें प्रतीति होती है ॥ ऐसा कहना बनता नहीं क्योंकि बहुतसे पदार्थ ऐसे हैं कि जो हमने जाग्रत् अवस्था देखे सुनेभी महीं परंतु उनकी स्वप्रमें प्रतीति होती है ॥ जेसे हमनें अपना शिर कटा हुआ कभी नहीं देखा ॥ ओर नहीं कभी सुना॥ तो फिर हमको स्वप्रमें ऐसा क्यों प्रतीत होता है ॥ कि हमारा शिर कट हुआ है॥ ओर जाम्रतमें हम कभी उडेभी नहीं परंतु हम स्वप्रमें ऐसा देखते हैं कि हम उडे जाते हैं ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि ऐसा नेम नहीं हे ॥ कि जाग्रत् अवस्थामें देखे सुने पदार्थोंकाही स्वप्न हो ॥ किन्तु विना देखे सुनें पदार्थों कीभी स्वप्रमें प्रतीति होती है ॥ उत्तर ॥ ऐसा नेम नहीं हो सक्ता कि इसी जन्मके बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ६३ देखे सुने पदार्थोकी स्पप्में प्रतीति हो ॥ किन्तु पूर्वजन्मके देखे सुने पदा्थोकाभी अन्तःकरणमें संस्कार बना रहता हैं ॥ ओर उसी संस्कार करके उन पदार्थॉकी स्वप्रमें प्रतीति होती है ॥ इसी प्रकार तुमने पूवेजन्ममें अपना शिर कटा हुआ देखा होगा॥ ओर कभी उडते हुएभी देखा होगा॥ इसलिये तुमको स्वप्रमें ऐसी प्रतीत हुई कि हमारा शिर कटा हुआ है ॥ या हम उडे जाते हैं ऐसा स्वप्रमें प्रतीति होना यह पूवेजन्मके संस्कारसे हे ॥ शंका॥आपने जो कहा कि पूर्वजन्मका संस्कार अन्तःकरणमें स्थित रहता है ॥ ऐसा कहना बनता नहीं क्योंकि किसी पुरुषकोभी ऐसा संस्कार नहीं रहता कि यूवे जन्ममें हमारा शरीर ऐसा था ओर इस स्थानपे था तो फिर किस प्रकार सिद्ध हो सक्ता है कि पूर्वजन्मका संस्कार अन्तःकरणमें स्थित रहता हे ॥ उत्तर ॥ प्वेजन्मका संस्कार तो अन्तःकरणमें रहता है ॥ परंतु जो वस्तु अत्यन्त सुखके देनेवाली होती

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 है ॥ओर जो वस्तु अत्यन्त दुःखके देनेवाली होती हे॥ उस वस्तुका संस्कार रहता है ॥ किन्तु सामान्यका नहीं रहता ॥ जेसे बालक उत्पन्न होतेही दूध पीने लगता है ओर उसने इस जनन्ममें तो कभी दूध पियाही नहीं ओर नहीं कभी सुना कि दूधके पीनेसे शरीरकी रक्षा होती हे॥ परंतु वह बालक उत्पन्न होतेही दूध पीने लगता है ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि पूर्वजन्ममें जो पीनेसे उसके शरीरकी रक्षा दूध हुई है ॥ ओर उसने दूध पिया हे ॥ इस कारणसे वह उत्पन्न होतेही दूध पीने ठगता है॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि पूर्वेजन्मका संस्कार अन्तःकरणमें अवशय रहता है ॥ इसी प्रकार जाग्रत् अवस्थामें देखे ओर सुने पदार्थोका नो अन्तःक्रणमें संस्कार तिस संस्कार करके निद्धासमय विषे नो प्रपेच प्रतीति हो तिसको स्वप्न अवस्था कहते हैँ॥२४॥ अथ सुषरत्तिअवस्था वर्णन। अतः सुषुत्यवस्था का । अहं किमपि न जानामि सुखेन भया निद्वानुभूयत बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकारिका । ६५७ इते सुषुप्त्यवस्था । कारणशरीराभिमानी आत्मा म्रज्ञ इत्युच्यत ॥ २५॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ इसके अनन्तर सुषुप्ति अवस्था कोनसी हे ॥ उत्तर ॥ में कुछ नहीं जानता हुआ केवल सुखपूर्वक मेंने निद्राकाही अनुभव किया ऐसी गाढ निद्राकोही सुषुप्ति अवस्था कहते हैं ॥ ओर तिसमें कारणग़रीर हे ॥ तिस कारणशरीरव्यश्का अभिमानी जीवात्मा हे॥ प्राज् हे नाम जिनका ॥ ओर वही आत्मा सुषुप्ति अवस्था कारण समष्टि अभिमानी होनेसे ईश्वर आत्मा है ॥ अव्याकृत है नाम जिसका ॥ ओर जीवात्मामें ओर ईश्वर आत्मामें कुछभी भेद नहीं ॥ कितु व्यश्सिमाशि भेद करके भेद प्रतीत होता है ओर वास्तवमें तो व्यश्टि ओर समष्टि भेद कल्पित हें ॥ ओर जब कि व्यश्टिसमएटि भेद कल्पित हैं तो फिर जीव ईश्वरभावभी कलिपत हे क्योंकि जीव इइवर भाव व्यष्टि समष्टि भेद करके हे ॥ किन्तु बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

६६ तखबोध-टीका । वास्तव आत्मा शुद्ध हे ओर एक है ॥ जेसे घटाकाश ओर मठाकाशंमें घट ओर मठ भेद करके भेद प्रतीत होता है ॥ क्योंकि आकाश तो दोनोंमें एकही है ॥ ओर जेसे घटाकाश ओर मठकाशामेंसे घट मठ कल्पित भावके त्यागनेसे केवड एक आकाहाही रह जाता है ॥ इसी प्रकार नीवात्मा अथोत् अल्पन् चेतन्य ओर ईचवरात्मा अथात् सर्वज्ञ चेतन्य इन दोनोंमेंसे सर्वेज्त्ता ओर अट्पज्ञता इस कल्पित भेदको त्यागनेसे आकाशवत् एक शुद्ध चेतन्य चतुर्थ अवस्था तुय्येरूप तीनों अवस्थाओंका साक्षी है ॥ इन अवस्थाओंके पश्चात् पंचकाशोंकी कहता हूं॥ २० ॥ ._ अथ पंचकोशवर्णन। पंच कोशाः के। अन्नमयः, प्राणमयः, मनोमयः, विज्ञानमयः, आनंदमयशति ॥ २६ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ पांच कोश कोनसे हें ॥ उत्तर ॥ प्रथम तो अन्नमय कोश हे॥ दूसरे प्राणबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 मय कोश है॥ तीसरे मनोमय कोश है ॥ चोथे विज्ञानमय कोश हे॥ पांचवां आनंदमय कोश हे॥ओर कोश नाम मियानका है ओर ये पांच कोश आत्माके रहनेका स्थान है ॥ २६॥ अथ अन्नमयकाशवणंन। अन्नमयः के | अन्नरसनव भरा अन्नरसेनेव वृद्धि प्राप्य अन्नरूपष्थिव्यां यद्विलीयते तदन्नमयः कोशः स्थलशरीरघ ॥ २७ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ अन्नमय कोश किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ अन्नके रससे जो उत्पन्न होय ओर अन्नके रससे भिसकी वृद्धि होय ॥ ओर अमन्नरूप प्रथिवीमें जो लीन हो जाय तिसको अन्नमय कोश कहते हैं ॥ अथांत् स्थूलशरीर ॥ प्रश्न ॥ आपने जो कहा कि स्थूलशरीर अन्नके रससे उत्पन्न होता है ॥ ओर अमन्नरससे बढता है ॥ सो किस प्रकार उत्पन्न होता ओर बढता है ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 उत्तर ॥ अन्न करके अस्थिमांसादि वस्तुओंको पुष्ठता प्राप्त होती है॥ ओर उस पुष्ठता करके अस्थिमांसादि वस्तुओंका वी बनता है ॥ ओर उस वीयंका श्लीके रुधिरके सम्बंधसे स्थूल शरीर बनता है ॥ ओर वह वीये महा अशुद्ध हे ॥ कि जिसके स्पशमात्रहीसे 8 हल. ओर, स्लानकी अपेक्षा होती है ॥ ओर ऐसी अशुद्ध वस्तुका बनकरकेभी ऐसा विकाररूप हे कि जिसमें कोईभी वस्तु शुद्ध नहीं ॥ अर्थात् अस्थि मांस रुधिर मजा आदि वस्तु विकाररूप हैं ॥ ओर मल मूत्र करके ऐसा पूणे हे कि पाखानेसेभी अधिक॥ क्योंकि पाखाना तो कुछ काठुतक मल पृत्र करके रहितभी हो जाता ॥ परंतु यह ऐसा पाखाना है कि जिसमें थोडा बहुत मल मूत्र सदाही भरा रहता हे॥ ओर फिर केसा है कि अनित्य अथोत् पठुभर जिसके रहनेका विश्वास नहीं है परंतु बड़ा आश्चय्ये हे कि ऐसे विकाररूप गरीरकों पाकर इसको ऐसा जानते हैं कि हम बडे शुखवीर हैं ओर बड़े प्रतापी हैं॥ ओर हमारा बडा बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ६९ दिव्य रूप हे ओर इस नाशवान शरीरको हमेशा रहनेवाला जानकर इसके वास्ते अनेक प्रकारके पापोंसे घनको संग्रह करते हैं ॥ परंतु ऐसा विचार नहीं करते कि बड़े बड़े चक्रवर्ती राना अपने चक्रवर्ती राज्यको छोडकर चले गये॥ परंतु यह उनके संगमें कोईभी वस्तु नहीं गई ॥ तो फिर में नो झूंठ ओर कपटसे धनको संग्रह करता हूं॥ ओर ये मेरे संगमें केसे जावेगा ॥ इसलिये बडा आश्चय्ये हे कि विकाररूप अनित्य शरीरके वास्ते अनेक प्रकारके झगडे ठानते हैं ॥ ओर यह बहुतही बडा आश्चर्य है कि नो पुरुष पदा्थोंका विकाररूप ओर नाशवान जानते हैं ॥ ओर ऐसा कृथनभी करते हैं कि शरीरादि पदाथ विकाररूप ओर नाग़वान हैं ॥ परंतु पदार्थोमेंस आसक्तता नहीं छोडते॥ इसलिये यह शरीर अन्नरससे जो उत्पन्न हुआ है॥ सो महान विकाररूप है ॥ ओर इस दारीरकी जो अन्नरससे वृद्धि होती है ॥ सोभी महान दुःखरूप हे ॥ क्यों कि अन्नरस जो वीयोतिशायसे उत्पन्न होकर अन्नसे बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 उत्पन्न हुआ जो दूध तिसके पीनेसे यह शरीर कुमार अवस्थाको जो प्राप्त होता है ॥ सो कुमारअवस्थाभी महान दुःखरूप है ॥ क्योंकि वाठक अवस्थामें पराधीन रहना पडता है ॥ ओर पराधीनताके समान कोई दुःखभी नहीं ॥ ओर बालकअवस्थाके पश्चात् अन्नके खानेसे जो यह शरीर युवाअवस्थाको प्राप्त होता है॥ सो युवाअवस्था महान दुःखरूप हे ॥ क्योंकि युवाअवस्थामें कामातुर होकर ख्ीके वश्में ही नाता हे ओर जेसे कलंदर बंदरसों परघर नचाता फिरता हे ॥ इसी प्रकार श्री कामातुर पुरुषको घर घर भोगरूप दंडसे नचाती हैं॥ ओर महान दुःखको प्राप्त करती हे॥ ओर युवाअवस्थाके पश्चात् अन्नके खानेसे जो वृद्ध अवस्था प्राप्त होती है ॥ सो वृद्ध अवस्था महान दुःखरूप हे ॥ क्योंकि जितने रोग हैं वे सब वृद्धअवस्थामें शरीरके बीचमें आय प्राप्त होते हें ॥ ओर सम्बंधी लो कभी तिरस्कार करने लगते हैं ॥ इसवास्ते वृद्धावस्थाभी महान दुःखरूप है॥ ओर जब शरीर छूटने बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७१ लगता है ॥ उस वक्त एक तरफ तो यमके दूत आकर दुःख देते हें ॥ ओर इस तरफ स्त्री पुत्र आकर रोते हैं । ओर कोई वश्र अच्छा होता है ओर कोई अंगूठीभी हाथमें हो तो इन सब वस्तुओंकों उतार लेते हैं ॥ ओर उल्टा एसा दुःख देते हैं कि जो कहीं रक्खा रखाया धन हो तो उसकी बताओ इसी प्रकार दोनों तरफसे महादुःखी होकर शरीरको छोड देता है ॥ ओर यह शरीर अन्नरूप पृथिवीम लीन हो जाता है ॥ इसवास्ते स्थूल शरीरको अन्नमय कोश कहते हैं ॥ ओर दुबला होना मोटा होना यह अन्नमय कोशका स्वभाव है ॥ २७॥ अथ प्रागमयको शवर्णन। प्राणमयः कः । प्राणादिपंच वायवः वागादीद्रियपंचकं प्राणमयः ॥ २८ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ प्राणमय कोश किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ प्राणसे आदि लेकर जो पांच वायु हैं॥ ओर वाकसे आदि लेकर जो पांच कर्मेन्द्ियें हैं ॥ इन सबको मिलके जो है तिसको प्राणमय कोश कहते हैं॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

७२ ततबोध-टीका । प्रश्न ॥ प्राणसे आदि लेकर मो पांच वायु हें सो कौनसी हैं ॥ ओर इस शरीरमें कहांपर रहती हैं ॥ ओर क्या उनका स्वभाव है तो कहो ॥ उत्तर ॥ प्राण १ अपान २ समान ३ उदान ४ व्यान « यह पांच प्राणवायु हैं ॥ ओर इस शरीरमें प्राणका हृदयमें निवास है ॥ ओर अपान वायुका गुदामें निवास है ॥ ओर समान वायुका नाभिमें निवास हे ॥ ओर उदान वायुका कंठमें निवास है॥ ओर व्यान वायुका सम्पूर्ण शरीरमें निवास है ॥ यह पांच वायुओंके स्थान हैं ॥ ओर प्राणवायु जो हृदयमें रहती हे ॥ सो ऊपरको चला करती है ओर दब्दके स्वरूपको बनाना इसका स्वभाव है ॥ ओर गुदामें जो अपान वायु है सो नीचेको चला करती है॥ ओर मल मृत्रका त्याग करना उसका स्वभाव है ॥ ओर नाभिमें जो समान वायु सो सर्वे खानपानको पाचन करके नाडियोंमें जुदा जुदा पहुँचाती हे ओर वह सवे नाडियोंमें फिरा करती है ॥ ओर नो उदान वायु कंठमें रहती है ॥ सो अन्न जल
बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७३ अथोत् खानपानको ग्रहण करके समान वायुके पास पहुँचाती हे ॥ ओर व्यान वायु जो सब शरीरमें रहती है ॥ सो सब रुधिरकी चलाया करती हे ॥ ओर शारीरको दुबठा मोटा करना यह इसका स्वभाव हे ॥ ये पांच वायु हैं ॥ ओर वाक़ पाणि पाद पायु उपस्थ यह पांच कमेन्द्रिय ॥ ओर पांच प्राण इन दशोंको प्राणमय कोश कहते हैं ॥ ओर भूख प्यास प्राणमय कोशका स्वभाव है ॥ ओर यह आ्रोणमय कोश सवे शरीरोंका नीवनहेतु हे ॥ क्योंकि शारीरमें श्रवणइन्द्रियके नहीं रहनेसे बधिर हो जाता है॥ ओर नेत्रोंके नहीं रहनेसे अंधा हो जाता है ॥ ओर जिद्‌ाके नहीं रहनेसे गूँगा हो जाता हे ॥ इसी प्रकार शरीरमें इन्द्रियोंके नहीं रहनेसे शरीरकी दशा बिगड जाती है॥ ओर मनके नहीं रहनेसे सुषुप्ति अवस्था हो जाती है परंतु मृत्यु नहीं होती ॥ ओर प्राणोंके नहीं रहनेसे शरीरकी मृत्यु हो जाती है ॥ ओर महान् भयंकर हो जाता हे ॥ ओर सम्पूर्ण मनुष्य उसको त्याग देते हें ॥ इसलिये
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

७७ तलखबोध-दीका । प्राणमय कोश सम्पूर्ण शरीरोंका जीवनहेतु है ॥ इति प्राणमयकोरशाः अथोत् यह प्राणमय कोश है॥ २८॥ अथमनीमयकोशवर्णन। | मनोमयः कोशः कः। मनश्र ज्ञानद्रियपचक मिलित्वा भवाति स मनोमयः को शः ॥२९॥ टीका॥ प्रश्न ॥ मनोमय कोश किसको कहते हैं॥ उत्तर ॥ एक मन ओर श्रोत्र लक चक्ष रसना ध्राण इन सबको मनोमय कोश कहते हैं ॥ ओर यह संकल्पविकल्परूप मनोमय् कोश इस शरीर में कर्मोंका करनेवाठा ॥ ओर कम्मोंका फल जो सुख दुःख तिसका भोगनेवाला हे ॥ क्योंकि जबतक शरीरमें मनोमय कोश रहता है तबतक शरीरमें क्रियाशक्ति रहती हे ओर जब शरीरमें मनोमय कोश नहीं रहता॥ अर्थात् तमरूप निद्रा करके आच्छादित हो जाता है॥ तब शरीरमें क्रिया शक्ति ओर भोगनेकी शक्ति नहीं रहती इससे यह सिद्ध हुआ कि इस शरीरमें संकल्पविकूट्परूप कम्मोंका करनेवाछा ओर सुख दुःखका भोगबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७७५ नेवाला मनोमय कोश है॥ इति मनोमयः कोशः॥२९॥
.._अथ विज्ञानमयकोशवणन। विज्ञानमयः कशबु ड्िज्ञानिन्द्रियपंचकं मिलित्वा यो मवति स विज्ञानमयः कोशः३ ०॥ टीका॥ प्रश्न ॥ विज्ञानमय कोश किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ एक बुद्धि ओर श्रोत्र त्वक चक्षु रसना घ्राण इन सबको मिलके जो है तिसको विज्ञानमय कोश कहते हैं ॥ ओर सत्य असत्यका निशय करना विज्ञानमय कोशका स्वभाव है ॥ इसको विज्ञानमय कोश कहते हैं ॥ ३० ॥ अथ आनंदमयकोंशवणन। आनंदमयः कः : एवमेव कारणशरीरेतातदबात्थमालनसत्त हि अशादवत्तिसहित सत् आनंदमयः कोशः। एतत्कौशरपंचकम्॥ ३१ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ आनंदमय कोश किसको कहते हैं॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 उत्तर ॥ इसी प्रकार कारणरूप जो अविद्या तिसमें जो मलिनसत्त्व अर्थात् रजोगरुण तमोग्रण करके सतोग्ुण दबा हुआ ॥ ओर प्रियादिवृत्तिसहित हुआ हुआ नो है तिसको आनंदमय कोश कहते हैं॥ ये पांच कोश हैं॥ हे ३ 4 ५ प्रश्न। प्रियादिवात्ति कौनसी हैं॥ तिनको वर्णन करो॥ उत्तर॥ प्रियाविवत्ति तीन प्रकारकी हें ॥ एक प्रिय दूसरी मोद तीसरी प्रमोद ॥ यह तीन प्रकारकी वृत्ति है॥ अभीष्ट वस्तुके देखनेसे नो आनंद होता हे तिसको प्रिय कहते हैं ॥ ओर अभीष्ट वस्तुके प्राप्त होनेसे जो आनंद होता है तिसको मोद कहते हैं ॥ ओर अभीष्टवस्तुके भोगनेसे जो आनंद होता है तिसको प्रमोद कहते हैं ॥ यह प्रिय मोद प्रमोद तीन प्रकारकी वृत्ति हैं॥ प्रश्ना। आपने जो कहा कि आनंदमय कोश प्रियादि वृत्तिसहित है ओर सुषुप्ति अवस्थामें होता है ॥ परंत मुषुप्ति अवस्थामें प्रियादि वृत्ति नही बन सकती ॥ क्यों कि सुषुप्ति अवस्था गाढ निद्राको कहते हैं ॥ तो फिर ।95 अ भीशिली॥ प्ीमिकिक सीर्मिक, आनंदमय कोश सुषुप्ति अवस्थाम केसे होताहे सो कहो॥

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ७७ उत्तर ॥ प्रियाविवृत्ति सुषुप्ति अवस्थामें अवश्य होती हैं ॥ क्यों कि जिस समय पुरुष थकित हुआ हुआ आता है उस समय ऐसा चाहता है कि मेरेको ऐसी निद्रा आवे कि जिसमें कुछभी बोध नहीं रहे॥ओर जब वो अभीष्ट वस्तुरूप निद्रा आती है तब उसको आते हुए देखकर जो आनंद होता है ॥ तिसको प्रिय कहते हैं॥ ओर अभीष्ट वस्तुरूप निद्राके प्राप्त होनेसे जो आनंद होता है तिसको मोद कहते हैं॥ओर अभीष्ट वस्तुरूप निद्राके भोगनेसे नो आनंद होता है तिसको प्रमोद कहते हैं।। इस प्रकार सुषुप्ति अवस्थामें आनंदमय कोश प्रियादिवृत्तिसहित होता है॥इति पंच कोशा/॥ ओर शुद्धसचिदानन्दस्वरूप जो आत्मा है सो इन पांचों कोशोंके सम्बंधसे कोशरूप प्रतीत होता हे ॥ जेसे स्वच्छ नो मणि है सो नीलवस्रके साथ सम्बंध होनेसे नीली प्रतीत होती है ॥ ओर पीतवद्नरके साथ सम्बंध होनेसे पीली प्रतीत होती हे ओर ऐसेही जंसे वद्नके साथ संबंध होगा वह मणि वेसी वेसी प्रतीत होगी परंतु बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 वास्तव मणिका स्वरूप शुद्ध हे इसी प्रकार शुद्ध जो आत्मा है ॥ सो अन्नमय कोशके साथ सम्बंध होनेसे में दुबला हूं मोटा हूं ऐसे भावको प्राप्त हुआ प्रतीत होता है॥ओर प्राणमय कोशके साथ सम्बंध होनेसे में भूखा हूं प्यासा हूं ऐसे भावको प्राप्त हुआ प्रतीत होता है॥ ओर मनोमय कोशके साथ सम्बंध होनेसे संकल्प विकटप करता प्रतीत होता हे ॥ ओर विज्ञानमय कोश के साथ सम्बंध होनेसे पदार्थोका निश्चय करना अथवा में ज्ञानी हूँ में अज्ञानी हूं ऐसे भावको प्राप्त हुआ प्रतीत होता है॥ ओर आनंदमय कोशके साथ सम्बंध होनेसे में सुखी हूं में दुःखी हूं ऐसे भावको प्राप्त हुआ प्रतीत होता है॥ ओर वास्तवमें तो आत्मा शुद्ध सचिदानंदस्वरूप है परंतु कोशोंके सम्बंधसे कोशरूप प्रतीत होता हे इति पंच कोशाः ॥ ३१ ॥

मदीयं शरीरं मदीयाः प्राणाः मदीयं मनश्च मदीया बुद्धिमंदीयं ज्ञानमिति सवेनेव ज्ञायते | तद्रथा मदीयलेन ज्ञातं बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ह कटककुंडलगृहादिक स्वस्माद्भिन्नं तथा पंचकोशादिक मदीयत्वेन ज्ञातमात्मा न भवांत॥ ३२ ॥ टीका ॥ मेरा दारीर है मेरे प्राण हैं मेरा मन है मेरी बुद्धि हे मेरा ज्ञान हे यह सब अपनेही करके जाने जाते हैं ॥ परंतु यह आत्मा नहीं है॥ क्योंकि जेसे कडे कुंडड ओर ग्रह इत्यादि ओर जो सब पदाथे हें सो सब अपनेही करके जाने जाते हें ॥ परंतु हैं अपनेसे भिन्न इसी प्रकार ये पांच कोश अपनेही करके जाने जाते हैं ॥ परंतु ये पांच कोश आत्मा नहीं है ॥ ३२ ॥ अथ आत्मा सब्निदानंदस्वरूपवर्णन। आत्मा तर्हि कः । सच्चिदानंदस्वरूप:॥३ ३॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ तीन जो शरीर हैं ॥ स्थूछ, सूक्ष्म, कारण ॥ ओर तीन अवस्था ॥ जाग्रतू, सप्न, सुधुप्ति॥ ओर पांच कोश ॥ अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

८० तलखबोध-टीका । /्् जक ज ३ विज्ञाममय, आनंदमय ॥ ये सब आत्मा नहीं ह तो आत्मा कोन हैं ॥ उत्तर ॥ आत्मा सत् चित् आनंदस्वरूप हे ॥३३॥ अथ सच्चिदानंदाथवर्णन। सत्किम । कालतये5पि तिष्ठतीति सत्। चित्कि ज्ञानस्वरूपं। आनंदः कः। सुखस्वरूप: । एवं सच्चिदानंदस्वरूपं स्वात्मान विजानायात् ॥ ३४ ॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ सत् किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ भूत्, भविष्यत्, वर्तमान इन तीनों काढोमें नो नाशको नहीं प्राप्त ही अथोत् निसका नहीं कभी नाझ हुआ हो॥ ओर नहीं अब नाश है ॥ ओर जिसका आगेभी नाझ नहीं होगा ॥ ऐसा जो तीनों काठोंमें स्थित रहे न्यून अधिक भावको नहीं प्राप्त हो ऐसा जो है तिसको सत् कहते हैं ॥ प्रश्न ॥ चित किसको कहते हें ॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेकरानन्दप्रकाशिका । < १ उत्तर ॥ ज्ञानस्वरूप सम्पूर्ण नगतको सत्ता स्फूर्ति देनेवाला ओर सबसे न्यारा सबका साक्षी ॥ जेसे राजा अपनी सेनासे न्‍्यारभी हे ओर सबका साक्षी हे ॥ इसी प्रकार आत्मा सबसे न्यारा हे ओर सबका साक्षी है ॥ ऐसा जो हें तिसको चित् कहते हैं ॥ प्रश्न ॥ आनंद किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ सुखस्वरूप कि जिसमें दुःखका लेशमात्रभी नहीं ॥ ओर कूटस्थ अथात् जेसे लोहिकी ऐहरनके ऊपर अनेक प्रकारके वरतन बनबनकर चले जाते हें॥ परंतु वह ऐहरन अपने स्वरूपको नहीं त्यागती॥ इसी प्रकार चेतन्य आत्माकी सत्तासे अनेक मायिक जो पदाथे सो बनते रहते हैं॥ परंतु वह आत्मा अपना जो सुखरूप है तिसको नहीं त्यागता ॥ क्योंकि आत्मा सुखस्वरूप है ।। ओर जेसे सूर्य्यके बीचमें अंधकार ओर प्रकाश दोनों नहीं बनते॥ सूरय्येको प्रकाशरूप होनेसे इसी प्रकार आत्मामें दुःख सुख दोनों नहीं बनते ॥ क्योकि आत्मा सुखस्वरूप हे ऐसा जो है॥ तिसको

बांदप्रातवतना7080609ाा.८एा

 आनंद कहते हैं ॥ ओर ऐसा जो सचिदानंद्स्वरूप है। तिसको अपना आत्माही जाने ॥ अथोत् वह मेरेसे प्थक् नहीं है ॥ ओर ऐसे जाननेकोही परमानंद कहते हैं ॥ ३४ ॥ अथ चतुविशतितत्तवोत्पत्तिप्रकारंवक्ष्यामः। अब मायासे चोवीस तत्वोंकी उत्पत्तिके प्रकारको कहता हूं ॥ अथ मायासे पांचों तत्वोंकी उत्पत्ति वर्णन। ब्रह्माश्रया सत्ततरजस्तमोग्णात्मिका माया अस्ति । ततः आकाझ्ः संभूतः। आकाशाद्वायः । वायोस्तैज : । तेजस आपः। अद्भयः एथिवी॥ ३५॥ टीका ॥ ब्रह्मके आसरे सत् रण तम तीन गुणरूप माया है ॥ तिस मायासे आकाश उत्पन्न हुआ ॥ ओर आकाइसे वायु ॥ ओर वायुसे अग्नि ॥ ओर अमिसे ५ का०73408609ठावो।.

शंकरानन्दप्रकाशिका । ८१ जल ॥ ओर जटसे पृथिवी उत्पन्न हुईं ॥ इस प्रकार मायासे पांच तत्त्व उत्पन्न हुए॥ अथवा॥ ब्रह्मके आसरे सत् रज तम तीन गरुणरूप माया अभिन्न रूपतासे स्थित है॥ जेसे अग्नेमें दाहशक्ति अभिन्न रूपतासे स्थित है ॥ अथोत दाहशाक्ति अग्निसे भिन्नभी नहीं ओर अग्निके आसरेभी हे ॥ इसी प्रकार माया ब्रह्मयसे भिन्नभी नहीं ओर ब्रह्मके आसरेभी हे ॥ अथांत् ब्रह्ममें माया अनिवैचनीय हे तिस मायासे शब्दतन्मात्रा उत्पन्न हुई॥तिस शब्दसे आकाहझ उत्पन्न हुआ इसवास्ते आकाशमें शब्द गुण हे ओर आकाझतसे स्पशेतन्मात्रा उत्पन्न हुईं ॥ तिस स्पइसे वायु उत्पन्न हुई ॥ इसवास्ते वायुमें शब्द स्परे दोनों ग्रुण हैं ॥ ओर वायुस रूपतन्मात्रा उत्पन्न हुई तिस रूपसे अग्नि उत्पन्न हुईं ॥ इसवास्ते अभ्रिमें शब्द स्पशे रूप तीनों गुण हैं ॥ ओर तिस अग्निसे रसतन्माजा उत्पन्न हुई तिस रससे जल उत्पन्न हुआ इसवास्ते जलमें शब्द स्पशें रूप रस चारों गुण हैं ॥ ओर जलसे गंधतन्मात्रा उत्पन्न हुई ॥ ओर गंधसे पृथिवी उत्पन्न बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

«१ तलबोध-टीका । है॥ इसवास्ते प्रथिवीमें शब्द स्पशे रूप रस गंध यह पांचों ग्रुण हैं ॥ क्योंकि कार्य्यमें कारण गुण अवइयही होता है ॥ इस प्रकार मायासे सूक्ष्म तन्॒मात्रा सहित पांच तत्त्व उत्पन्न हुए॥ जेसे माया तीन ग्रणरूप है॥ इसी प्रकार पांच तत्व सत् रज तम तीन गुण रूप हैं॥ ओर इन तीन गुणरूप पांचों तत्वोंसे सम्पूर्ण संसार उत्पन्न हुआ है तिसको सुनो ॥ ३५ ॥ अथ पांचततोंसे ज्ञानेंद्रिय और अन्तः करणकी उत्पत्तिवर्णन। एतषा पचतत्वाना मध्य आकाशस्य सात्त्िकांशात् श्रोत्रेंद्रियं संभूतम्। वायोः सांत्तकांशात लांगद्रिय सभृ: तम्र | अम्नः सात्तकाशात चक्षार न्द्रथ संभूतम् । जलस्य सात्त्विकांशात् रस नेंद्रियं संभृतमाप्थिव्याः सात्तिकां शात् प्रार्णेद्रियं संभूतम ।एतेषां पंचतत्तवाबांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

शंकरानन्दप्रकारिका । <८५ नां समष्टिसात्तिकांशात्
मनोबुद्धचहंकाराचेत्तांतःकरणानि संभूतानि ॥ ३६ ॥ टीका ॥ इन पाचों तत्त्वोंके मध्यमेंसे आकाशके सतोगुणअंद्रासे श्रोत्र अथोंत् कानोंकी उत्पत्ति हुई ॥ ओर वायुके सतोम्रणअंशसे त्वचाइन्द्रियकी उत्पत्ति हुई ॥ ओर अग्निके सतोगण अंशसे नेत्र इन्द्रियकी उत्पत्ति हुई ॥ ओर जलके सतोगुणअंशसे रसना अथोत् निहाइन्द्रियकी उत्पत्ति हुईं ॥ ओर प्ृथिवीके सतोगुण अंझसे प्राण अथोत् नासिकाइन्द्रियकी उत्पत्ति हुईं ॥ ओर इन पांचों तत्त्वोंके सबके सतोग्रुण अंजसे मन चित्त बुद्धि अहंकार यह अन्तःकरण उत्पन्न हुआ ॥ प्रश्न ॥ जेसे पांचों तत्त्वोंके सतोगरुणका काय्ये श्री आदि पांच ज्ञानेन्ियें हें ॥ वेसेही पांचों तत्तोंके सतोगुणका कार्य्य अन्तःकरण हे॥ तो फिर ऐसा भेद क्यों है कि इन्द्रिय तो एक एक विषयको ग्रहण करती है ॥ ओर अन्तःकरण पांचों विषयको ग्रहण करता हे ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 उत्तर ॥ जेसे पांचों तत्त्वोंके सतोग्रणका कार्ये इन्द्रिय है ॥ वेसेही अन्तःकरण हे॥ परंतु इतनाही भेद है कि इन्द्रिय एक एक तत्त्वका काय्ये हे ॥ इसवास्ते इन्द्रिय एक एक विषयकों ग्रहण करती है ॥ ओर अन्तःक्रण पांचों तत्त्वोंके सबके सतोगुणका काय्ये है ॥ इसवास्ते अन्तःकरण पांचों विषयोंको ग्रहण करता है॥ ३६॥ , अथ अन्तःकरणका स्वरुपवर्णन। संकल्पविकुल्पात्मकं मनः ॥ निश्चयात्मिका बुद्धिः। अहं करत्तों अहंकारः । चिंतनकर्तं चित्तम | मनसो देवता चंद्रमाः । बुद्धेजह्मा। अहंकारस्य रुद्रः । चित्तस्थ वासुदवः ॥ ३७ ॥ टीका ॥ अन्तःकरणका वास्तव स्वरूप तो एकही है॥ परंतु क्रियाभेद होनेसे चार प्रकार करके नामभेद् हुआ ॥ जेसे कोई एक ब्राह्मण मंदिरमें पूजन करने लगा तो उसको पुजारी कहने छगे ओर जब पढनेबांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

 पैंढोंने ठगा तब उसको पंडित कहने लगे॥ इसी प्रकार एक ब्राह्मणके अनेक नाम क्रियाभेद होनेसे हो गये ॥ ऐसेही अन्तःकरणका वास्तव स्वरूप एकही है ॥ परंतु संकल्प विकल्प करने लगा तो उसका नाम मन हो गया ॥ ओर जब चिन्तवन करने लगा तब उसका नाम चित्त हो गया ॥ ओर जब उसने निश्चय किया तब वही बुद्धि हो गईं ॥ ओर जब उसमें अहंकृत भाव आया तब वही अहंकार हो गया॥ जेसे किसी पुरुषको देखा कि यह पुरुष वोही हे या कोई ओर है ॥ जब ऐसी अन्तःकरणकी वृत्ति हुईं तिसको मन कहने लगे ॥ ओर जब उस वृत्तिने ऐसा विचार किया कि इस पुरुषको श्रीगंगा्नीके तीरे उस समय देखा था ऐसी वृत्तिको चित्त कहने लगे ॥ ओर जब उस वृत्तिने निश्चय किया कि यह पुरुष वही है ॥ तब उसी वृत्तिको बुद्धि कहने छगे ॥ ओर जब उसने हृढ निश्चय किया कि यह पुरुष वही हे ॥ इसमें किचित्‌भी संदेह नहीं तब उसी वृत्तिको अहंकार कहने लगे॥

बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एा

८८ तत्वबोष-टीका । इसी प्रकार अन्तःकरणका वास्तव स्वरूप एकही है ॥ परंतु क्रियाभेद होनेसे मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार, चार भेद हुए॥ ३७॥ भद्ि य ओ अथ पंचतत्त्वोंसे कर्मेंद्रिय और प्राणोत्पात्तिवणेन। एतेषां पंचतत्त्वानां मध्ये आकाशसथ राजसांशात् वागिद्रिय संम्रूतम । वायो राजसांशात पारणाद्विय़ं संभूतम। वह्नेः राजसांशात पार्देंद्रियं संभूतम् । जलस्य राजसांशात् उपफस्थेंद्रियं संभरूतम्र । प्रथिव्या राजसांशात् गुदेंद्रियं संभूतम।एतेषां पंचतत्त्वानां समष्टिराजसांशात पंच प्राणाः संभूताः ॥३८॥ ठीका॥ इन पाचों तत्त्वोंके मध्यमेंसे आकाशके रजोगुण अंडासे वाणी उत्पन्न हुहे ॥ ओर वायुके रजोगुण अंगसे पाणी अथांत् हाथ उत्पन्न हुए॥ ओर अग्निके बांदप्रातवनॉा7080609ात्ा।.८णा

 रजोगुण अंशसे पाद अरथात् पाओं उत्पन्न हुए ॥ ओर लके रजोगुण अंगझसे उपस्थ अर्थात् लिगइद्रिय उत्पन्न हुईं॥ ओर प्थिवीके रजोगुण अंशसे ग्रुदा उत्पन्न हुईं॥ ओर इन पांचों तत्त्वोंके सबके रजोगुण अंशसे पांच प्राण उत्पन्न हुए ॥ ओर पांचों तत्तवोंके सतोगुण रजोग्रणसे सूक्ष्म शरीर हुआ॥ ओर अब तमोगुणसे स्थूठ शरीर हुआ यह कहता हूं॥ ३८ ॥ अथ पंचीकरणवण्ेन। एतेषां पंचतत्त्वानां तामसांशात् पंचीकृतपंचतत्त्वानि भवांते। पंचीकरणं कर्थं इति चेत् । एतेषां पंचमहाभूतानां तामसांशस्वरूपं एकं एक भूतं द्विधा विभज्य एकं एकमध्े एथक तष्णीं व्यवस्थाप्य अपरमपरमर्ध चतुर्धा विभज्य स्वाधमन्येषु अर्धेषु स्वभागचतुष्टयसंयोजन काये तदा पंचीकरणं भवति।

९० तत्बोध-टीका । एतेभ्यः पंचीकृतपंचमहाभूतेभ्यः स्थूलशरीरं भवाति । एवं पिंडब्रह्मांडयोरेक्यं संभूतस॥ ३९ ॥ टीका ॥ इन पांचों तत्त्वोंके तामस अंडासे पंचीकृत पंचमहाभूत अथोत् पंचीकरण हुआ यदि तुम कहो कि पंचीकरण क्या है ॥ तो श्रवण करो ॥ इन पांचों तत्वोंके तामसअंश करके एक एक तत्त्वके दो दो भाग किये तिसमें से एक एक भाग जुदा जुदा चुपचाप स्थापन कर दिया ॥ ओर आधा आधा जो बाकी बचा तिसके चार चार भाग करके अपने अपने आधे आधेको छोडकर उन चारोंमें एक एक मिला दिया ॥ तब सबके पास आधा आधा अपना ओर आधे आधेमें वो चारों हो गये।॥ इस प्रकार पंचीकरण होता है ॥ दृष्टंत ॥ एक समय पांच पुरुष श्रीगंगानी महारानीके दशन वा खस्नानको गये॥ओर उनके पास भोजनोंके वास्ते कुछ फलभी थे ॥ ओर उनमें एक ब्राह्मण था उसके पास नों नारंगी थीं॥ ओर दूसरा क्षत्री था उसके पास नों नाहपाती थीं ओर बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 तीसरा वेशय था उसके पास नों सीताफल थे॥ चोथा ओर कायर्थ था उसके पास नों आम थे॥ ओर पांचवों जाट था उसके पास नों बेल थे ओर जब यह पांचों पुरुष श्रीगंगानीके किनारे पहुँचे तब स्नान ओर श्रीगुरुके चरणोंका ध्यान करके अथाोत् नित्यकमंसे निश्ि‍त होकर जब भोजन करने लगे तब पांचोंने एक एक फल अश्रीगंगाजीके अपंण करा॥ ओर तब उनके पास आठ आठ फल बचे ॥ ओर उस ब्राह्मणने अपनी आठ नारंगियॉमेंसे चार तो अपने पास रकक्‍खीं ॥ ओर चार उन क्षत्री वेश्य कायर्थ जाट इन चारोंको एक एक वाट दी ॥ इसी प्रकार उस क्षत्रीने अपनी आठ नाहपातियोंम्से चार तो अपने पास रक्‍खीं ओर चार वैश्य कायस्थ जाट ब्राह्मण इन चारोंको एक एक वाट दीं ॥ इसी प्रकार वेशयने अपने आठ सीताफलोंमेंसे चार तो अपने पास रक्खे ओर एक एक उनमेंसे उन चारोंको वाट दिया॥ इसी प्रकार कायस्थ जाट इन दोनोंने किया ॥ अर्थात् एक एकके पास पांच पांच बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

९२ तत्तबोध-टीका । प्रकारके फल हो गये॥ परंतु आधा आधा अपना भाग रहा ओर आधे आधेमें चारों रहे ॥ अथोत् सबके पास अपना भाग अधिक रहा ॥ इसी प्रकार आकाह, वायु, अंग्रे, जल, प्रथिवी इन पांचों तत्त्वोंकी मानना ॥ कि आकाझमें आधा भाग तो अपना हे ओर आधपेमें वायु अग्नि जल पृथिवी यह चारों हैं इसी प्रकार वायुके पास आधा भाग तो अपना हे ओर आधेमें अग्नि जल पृथिवी आकाश यह चारों हैं॥ ओर अग्मिके पासभी आधा भाग अपना है ओर आधा जल पृथिवी आकाश वायु इन चारोंका है ॥ ओर जलके पासभी आधा भाग अपना है ॥ ओर आधेमें पृथिवी आकाश वायु अग्मे ये चारों हैं॥ इसी प्रकार प्रथवीके पास आधा भाग तो अपना है ओर आधेमें आकाश वायु अम्नि जल यह घारों हैं ॥ इस प्रकार इन सबके पास आधा आधा भाग क्षपना अधिक ओर आधे आपेमें वे चारों हैं ॥ अर्थात् एक एक तत्त्वके पास पांचों पांचों तत्त्वोंका अंश है॥ इसको पंचीकरण कहते हैं॥इन पंचीकरण किये हुए पांच बांदप्रातवतना7080609ातॎा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ९३ महाभूतों करके स्थूल शरीर बनता है ॥ ओर इसमें ऐसा नियम है कि जिसमें आकागञ तत्त अधिक होता है॥ उस करके देवयोनिके शरीर बनते हैं ॥ जो कि अहरय हैं ॥ ओर जिसमें वायुतत्व अधिक है॥ उस करके पक्षियोंके शरीर बनते हैं॥ जो कि आकाश मारगमें विचरनेवाले हूँ॥ ओर जिसमें अग्नि तत्व अधिक होता है उस करके अग्निके बीचमें रहनेवाले जन्तुओंके शरार बनते हैं ॥ ओर जिसमें जल तत्त्व अधिक होता है॥ उस करके जलके बीचमें रहनेवाले ग्राह आदिक जन्तुओंके शरीर बनते हैं ॥ ओर जिसमें प्रथ्वी तत्त्व अधिक होता है॥ उस करके पर्थ्वाकि ऊपर विचरनेवाले पशु मनुष्यादिकोंके शरीर बनते हैं॥ अथोत् जिसमें यह तत्त्व अधिक होता है ॥ उस शार्ररका वही तत्त्व स्थान होता है ॥ इस प्रकार पंचीकरण हुए हुए पांच महाभूतोंकरके स्थूल शरार बनता है ॥ ३९ ॥ ७५3... + ५रनन पा + न -" + अक.. 3)» अम»म«न्ान»-न वाहक 3-3०५०नप७ ० > कननन- + आम - कामन#» + + ० + ही। बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

९४ अथ पंचीकरणम । आठ। वायु आठ | अग्नि आठ जल आठ भा-| पृथ्वी ल
भाग पूर्ण है. | भाग पूर्ण है. | भाग पूणे ह.। ग पूर्ण है. | भाग पृणे है. (तिसमस चार |
तिसमेसे चार |तिसमेसे चार | तिसमसे चार |तिसमेंसे चार भाग आका श्के भाग वाशके. |
भाग अभिके | भाग जलके- | भाग पृथ्वीके. और एक भाग।और एक क ओर एक भाग।ओर
एक भा- क एक भ वायृक्रा. अग्निका. जलका. | ग प्रथ्वीका, | आकाशका.एक भाग एक
भाग एक भाग । एक भाग एक भाग भम्रैका. | जलका | श्थ्वॉका. | आकाशका. |
बायुका'जलअ>»न+.. है. पका -तपादनहन्पन्थ ७-+प तर अदा उ2 पाक; ६३० ०१०५४
हि... कर कक डर पा पक 2-83 ललत>फ की पर +लिपर आब+
अिकर्नीनिजननअधयमनन-ओ >शनकने, एक भाग एक भाग एक भाग एक भाग एक भाग
जलका. | प्रथ्वीका. | आकाशका | वायुका- अग्निका. कद.» ५.43. ९७343».
“जमममनम-क3>.ध+म “कक जाओ कर % ७४0५3 #८क 2 4८ क ८5553 नमन ०
3 न्न्नमने 3 सनम सन ननत-जका+ बन ५६ ७०७४ एक भाग | एक भाग | एक भाग |
एक भाग | एक भाग पृथ्वीका., । आकाहका. | वायुका अम्नरिका. जलका. वनए७ कट“
००००. रा न] प्रकार आ-| इसी प्रकार | ईसी प्रकार | इसी प्रकार | इसी प्रकार ठों भाग पूर्ण
आठ भाग पूणे| भीठा भाग आठो भाग पूर्णआठो भाग पृण होकर आकाश| हाकर वाद [
होकर अ- लिक्र जल तत्व होकर प्रथ्वी तत्व आधिक | तत्व अधिक | व अधिक, धिक होनेसे
| तत्व अधिक होनेसे देवयों - होनेसे पक्षि- थ के ग्राह्मादक जलन ह्ृि/नस पशु म.. ८. |
रहनेवाले ज-। _ कि दिका वे निके शरीर | योके शरीर हे .. .. . | चरोके शरीर | नष्यादिकाके
शत न्तुआके शरीर म् जि पक बन. | बने. बने बने. शरीर बनें. इति पंचीकरणम् ।
बांदप्रातवाना7080609ात्रा।.८एा

शकरानन्दप्रकाशिका । ९७ अथ जीवइंश्वरस्वरूप वर्णन । स्थूलशरीरामिमानी जीवनामक ब्रह्म प्रतिबिंबं भवति।स एवं जीवः प्रकृत्या स्वस्मात् ईश्वरं भिन्नत्वेन जानाति। अविद्योपाधिः सन् आत्मा जीव इत्युच्यते मायोपाधिः सन इश्वर इत्यच्यते॥४ ०॥ टीका ॥ स्थूल शरीरका जो अभिमानी आत्मा हे॥ जीव है नाम जिसका सो ब्रह्मका प्रतिविब है ॥ सो जो जीवात्मा हे ॥ सो अपने स्वभावसे इंश्वरको अपनेसे भिन्न जानता है ॥ ओर वास्तवमें भिन्न नहीं है ॥ क्‍्योंकि ब्रह्मके आश्रय सत्, रज, तम, तीन गुण रूप माया अभिन्न रूपतासे स्थित हे ॥ तिस मायामें ब्रह्मका प्रतिबिब है ॥ सो माया दो प्रकारकी हे ॥ एक तो शुद्ध सत्वप्रधान माया अर्थॉत् सतोग्रुण करके रमोगरण तमोगुण दवा हुआ ॥ ओर दूसरे मर्लनन सत्त्वप्रधान अविद्या अर्थात् रजोग्रण तमोग्रण करके सतोगुण दबा हुआ ॥ इन दोनों माया ओर अविबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 द्यामें बह्मका प्रतिषिंव हे ॥ जो शुद्ध सत्त्प्रधान मायामें ब्ह्मका प्रतिबिव हे तिसको सर्वेशक्तिमान् ईश्वर कहते हैं ॥ ओर मलिन सत्त्वप्रधान अविथामें जो बलह्मका प्रतिबिव है॥ तिसको अल्प शक्तिमान् जीव कहते हें ॥ ओर इन दोनोंमें माया ओर अविद्यासे सवेशक्ति ओर अल्पशक्ति भेद करके भेद प्रतीत होता है ॥ परंतु वास्तव स्वरूप दोनोंका शुद्ध चेतन््य हे ओर वास्तवमें तो माया ओर अविद्याभी चेतन्यका विरास है ॥ ओर विछास विछासवालेसे प्रथरू नहीं होता अर्थात् दोनों एकही हैं ॥ इस प्रकार जीव् इश्वरमे भेद नहीं ॥ ४० ॥ एवं उपाधिभेदाज्ीवैश्वरभेदद्ष्टियोवत्पयतं तिष्ठति तावत्पर्यतं जन्ममरणादिरूपसंसारों न निवर्तते, तस्मात्कारणान्न जीवेशवरयो भेदबुद्धिः खीकायों 9 १॥ टीका ॥ इस प्रकार माया ओर अविद्या उपाधिभेदकरके जीवईश्वरमें भेदबुद्धि जबतक स्थित रहेगी ॥ तबतक जन्ममरणादि दुःखरूप संसार निवृत्त नहीं

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ९५७ होगा ॥ अथोत् जिस पुरुषकी जीव-इश्वरमें भदबुद्धि है वह पुरुष सदाही जन्म मरणरूप संसारको प्राप्त होकर अनेक प्रकार दुःख पाता है॥ जेसे अन्नके वीचमें जवतक रप्त बना रहता हे ॥ तबतक 4 अन्न उत्पन्न होता रहता है ॥ ओर जब अग्नि करके रस जल जाता हे ॥ तब वह अन्न उत्पन्न नहीं होता॥ इसी प्रकार जबतक कतो भोक्ता रूप रस बना रहता हे ॥ अथोत् अपनेको ब्रह्मसे भिन्न जानता हे ॥ तबतक जन्ममरणसे रहित नहीं होता ॥ ओर जब ज्ञानरूप अग्नि करके कतों भोक्तापना कप्रवत नाझ हो जाता हे ॥ तब फिर जन्ममरणको नहीं प्राप्त होता ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि अपनेको ब्रह्मसे भिन्न जाननाही जन्ममरणका हेतु हे ॥ इसवास्ते जीवईश्वरमें भेदबुद्धि स्वीकार नहीं ॥ ४१ ॥ अथ तत्तमासि महावाक्यस जाँव इश्वरकोी एकतामे प्रश्न उत्तर। ननु साहकारस्य किंचिज्ज्ञस्य जीवस्य बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 निरहंकारस्थ सर्वज्ञस्येश्वरस्य तत्त्व मसात महावाक्यात् कथमभदबाद्ध स्थादुभयाः वरुह् धमाक्रान्तत्वात् ॥४२॥ टीका ॥ प्रइन ॥ आपने जो जीवईश्वरकी एकता सिद्ध करी हे अर्थात् जीवईश्वर एकही है ॥ ऐसा कहनेसे ऐसी शंका होती है कि जीव तो अहंकारसहित है॥ ओर अल्पशक्तिवाल है ओर ईश्वर निरहंकार हे ॥ ओर सर्व शक्तिवाल है ॥ तो फिर तत्त्वमासि महावाक्यसे जीव इंश्वरकी एकता केसे हो सक्ती है॥ क्योंकि तत् शब्दका अर्थ सर्वज्ञ चेतन्य हे ॥ ओर त्वंपदका अर्थ अल्पक्ष चेतन्य है ॥ इस प्रकार दोनोंमें विरुद्ध धमें होनेसे जीव इंश्वर किस प्रकार एक हो सक्ते हें सो कहो ॥ उत्तर ॥ तत्त्वमसि इस महावाक्यके तीन पद हैं ॥ तत्, त्वं, असि अथात् सो तू है ॥ इस महावाक्यका यह अथे है ॥ ओर ततहाब्दका अर्थ सर्वज्ञ चेतन््य ओर त्वंपदका अर्थ अल्पज्ञ चेतन््य ॥ इन दोनोंमें चेतन्य तो एकही हे ॥ परंतु सर्वज्षता बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 अल्पज्ञता उपाधि करके भेद प्रतीत होता हे॥ इसवास्ते उपाधिके निषेषकोी कहता हूं॥ शब्दका जो अपने अर्थसे सम्बंध तिसको शब्दकी वृत्ति कहते हैं ॥ सोवृत्ति दो प्रकारकी हे॥ एक तो शक्ति वृत्ति ओर दूसरी लक्षणावृत्ति॥ ओर दशब्दका जो अपने अर्थसे साक्षात् संबंध तिसको शक्ति वृत्ति कहते हैं ॥ ओर शब्दका जो अपने वाच्यार्थें द्वारा अपेक्षित अन्य अथंसे सम्बंध तिसको लक्षणावत्ति कहते हैं ॥ ओर ज्ाक्ति वृत्ति करके जो अथे जाना जाय तिसको वाच्यार्थ कहते हैं ॥ ओर लक्षणा वृत्ति करके नो अर्थ जाना जाय तिसको लक्ष्यार्थ कहते हैं ओर जहांपर शक्ति वृत्ति करके यथार्थ अर्थकी प्राप्ति नहीं हो तहां लक्षणा बृत्ति आश्रय करी जाती है॥ सो लक्षणा तीन प्रकारकी है ॥ एक तो जहत् ॥ दूसरी अनहत्॥ तीसरी भागत्याग ॥ ओर जहांपर वाच्याथको त्याग कर वाच्याथके सम्बंधीका ग्रहण हो तिसको जहत् लक्षणा कहते हैं ॥ जेसे गंगायां घोषः ॥ अर्थात् गंगामें गरँओंका वाडा है ॥ यहांपर गंगाशब्दबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 का वाच्यार्थ देवनदीका प्रवाह तिसमें वाडेका होना अप्ृम्भव् प्रतीत हुआ ॥ इसवास्ते यहाँ पर शक्ति वृत्ति करके यथार्थ अर्थकी प्राप्ति नहीं होनेसे जहत् लक्षणा आश्रय करी गईं कि गंगाशब्दका वाच्याथ देवनदीका प्रवाह तिस प्रवाहको त्यागकर तिसका संबंधी जो किनारा तिस किनारेमें लक्षणा करी अर्थात् गंगानीके किनारेपर गोओंका वाडा है॥ इसको जहत् लक्षणा कहते हैं॥ओर दूसरे जहॉपर वाच्याथंसहित वाच्यार्थके सम्बंधीका ग्रहण हो तिसको अजहत् लक्षणा कहते हैं॥ जेसे शोणो घावति ॥ अथोत् शोण चलता है॥ ओर शोणगब्दका वाच्याथ छालरंग तिस रंगका चलना असम्भव हे ॥ इसवास्ते यहाँपर शरक्ति वृत्ति करके यथार्थ अथेकी ग्राप्ति नहीं होनेसे अजहत् लक्षणा आश्रय करी कि शोणश्नब्दका वाच्याथ छालरंग तिस ठालरंगका सम्बंधी जो घोड़ा तिस घोडेमें वाच्यार्थ ठालरंग सहित लक्षणा करी अथोत् छालरंगका पोडा चलता है ॥ इसको अ| ॥ शक से जहत् लक्षणा कहते हैं ॥ ओर जनहाँपर विरोधी भागका बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्द्प्रकारीका । १०१ त्याग करके अविरोधी भागका ग्रहण किया जाय ॥ तिसको भागत्याग लक्षणा कहते हैं॥ नेसे सोयं देवदत्तः॥ अथोत् 'सो यह देवदत्त हे! सो शब्दका वाच्याथ म्ृतकाल दूर देश है ॥ ओर अयंशब्दका वाच्यार्थ वत्तमानकाल समीप देश है ॥ ओर इसमें केवल देशकालही विरोधी भाग है॥ किन्तु देवदत्तका शरीर दोनोंमें एक है इसवास्ते यहाँपर भागत्याग लक्षणा करके देशकालविरोधी भागका त्याग किया ओर देवदत्त अविरोधी भागका ग्रहण किया इसको भागत्याग ठक्षणा कहते हैं ॥ इसी प्रकार तत्त्वमसि महावाक्यमें भागत्याग लक्षणा करी अथोत् ततहाब्दका वाच्याथ स्वज्ञ चेतन्य ॥ओर त्वंपदका वाच्याथ अल्पक्ञ चेतन्य ॥ इसमें चेतन्य तो एकही है ॥ केवऊ सर्वज्ञा ओर अल्पज्ञताही भेदकर्त्ता है ॥ इसवास्ते यहांपरभी भागत्याग लक्षणा करके सर्वेज्ता ओर अल्पज्ञता विरोधी भागका त्याग करके अविरोधी भाग जो चेतन्य तिसका ग्रहण किया॥ अथोत् जीवईश्वरमें नो अल्पज्ञता ओर सर्वज्ञता हे बांदप्रातवतना7080609ाता।.८एए

१०२ ततबोध-टीका । सो कल्पित है॥ वास्तव एक शुद्ध चेतन्यही है ॥ ओर वेदमेंभी लिखा है ॥ “ एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म ” इति श्रुतः ॥ अथे ॥ एकही एक अद्वितीय ब्रह्म है अथोत् जो कुछ हर्याहरय है सो सब एक ब्रह्मही हे दूसरी कोई वस्तु नहीं ॥ केवल गा चेतन्यका विलछास हे॥ परंतु वास्तव हे कुछ नहीं ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि मीवई-शर एकही है ॥ जेसे एक घटके अनेक नाम हूँ ॥ कुम्भ, कलश, पडा, इसी प्रकार एक आत्माके अनेक नाम हें ॥ ब्रह्म, चेतन्‍्य, ईश्वर, जीव, यह सब नाम कल्पित हैं ॥ वास्तव स्वरूप एकही है ॥ ४२॥ अथ लंपदमें जीव३-श्वरकी एकतावणेन। इति चेन्न । स्थूलसक्ष्मशरीराभिमानी त्वंपदवाच्याथः उपाधिविनिमेक्त समाधिदशासंपन्नं शुद्ध चेतन्यं तंपदलध्ष्याथः॥४३॥ टीका ॥ स्थूल सूक्ष्म शरीरका जिसको अभिमान है॥ सो त्वंपदका वाच्यार्थ है ॥ अथात् वही जीव है ॥
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । १०४३ ओर जिसको स्थूल सूक्ष्म शरीरका अभिमान नहीं ॥ ओर समाधि दश्ामें सम्पन्न हे ॥ अथात सम्पूर्ण हश्याहश्यको अपना आत्माही जानता हे॥ सो त्वंपदका लक्ष्याथ है॥ अर्थात् वोही शुद्ध सच्चिदानंद है ॥ वह भलेही शरीरमें स्थित हो परंतु हे वह ब्रह्मस्वरूप ॥ ४३ ॥ अथ तत्पदमें जीवई-्वरकी एकतावर्णन। एवं सर्वज्ञत्वादिविशिष्ट ईश्वरः तत्पदवा च्याथः । उपाधिशन्यं शुद्ध चेतन््यं तत्पदलक्ष्याथः। एवं च जीवेश्वरयोः चैत न्यरूपेणा$भेदे बाधकाभावः॥ ४४॥ टीका ॥ इसी प्रकार सर्वशक्तिमान् जो मायाविशिष्ठ इंश्वर है ॥ सो ततपदका वाच्याथे हे ॥ अथोत जेसे सीवमें अट्पदक्ति उपाधि हे ॥ इसी प्रकार ईश्वरमें सर्वे शक्ति उपाधि हे ओर सर्वेशक्तिरूप उपाधिसे जो शुन्य है शुद्ध चेतन््य सो ततपदका लक्ष्यार्थ है ॥ अथोत् जैसे जीवमेंसे अल्पशक्ति त्यागी जाती है ॥ इसी प्रकार बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 ईश्वरमेंसे सर्वशक्ति उपाधिको त्यागकर दोनोंको चेतन्यरूप होनेसे भेदवादका अभाव है ॥ अथीत् दोनों एकही हैं ॥ ४४ ॥ अथ जीवन्मुक्तका रक्षण। एवं च वेदान्तवाक्यः सहुरुपदेशेन च सर्वष्वापे भूतेषु यषां ब्रह्मब्ठरुत्पन्ना ते जावन्मुक्ता इत्यथः॥ ४५॥ टीका ॥ इसी प्रकार वेदान्तवाक्योंकरके ओर सहुरुके उपदेशकरके सम्पूर्ण टशयाहरयमें मिस पुरुषकी ब्रह्मबुद्धि उत्पन्न हुई है ॥ अथात् सम्पूण दृश्याहश्यको ब्रह्मस्वरूपही देखता हे ॥ क्योंकि आदिमें शुद्ध सचिदानंद स्वरूप एकन्रह्म हे ॥ ओर अन्तमेंभी एक ब्रह्म है॥ तो फिर मध्यमें कोई दूसरी वस्तु नहीं ॥ किन्तु मध्यमेंभी ब्रह्मदी हे ॥ ओर ब्रह्म हे अद्वितीय कि जिसमें शहाश्ंगकी नाई द्रेतका अत्यन्ताभाव है ॥ अर्थात् सम्पूर्ण दृशयाहइयमें जिसकी एक आत्मबुद्धि है ॥ तिसको जीवन्मुक्त कहते हैं ॥ ४५ ॥ बांदप्रातवना7080609ात्ा।.८एणा

शैकरानन्दप्रकाशिका । १०५७ : कः । यथा देही5ह एरू ननु जीवन्मुक्तः कः। यथा दही है 7४ पोहहं ब्राह्मणो5हं शद्रो:हमस्मीति दंढ निश्चयस्तथा नाई ब्राह्मणः न शद्धः ने पुरुषः किन्तु असंगः सचिदानंदरतरू ! प्रकाशरूपः स्वोन्त्यामी पिदाकार रूपों $स्मीति दृने कक 5परोक्षज्ञा नवाब जीवन्म्ुक्तः ॥ ४६ । ही “३ ॥ प्रश्न ॥ आपने जीवन्मुक्तका छा के । हा परंतु अब खुलासा करके औरभी ऊना ये 3 उत्तर ॥ जेसे यह अध्यास हो रहा है कि में ओ हूँ र्क हूं, में शूद्र हूँ, में शरीर 8) में हूँ, ऐसा जो दृढ हु # 5 अध्यास है ॥ तिस 0 ३3४० निवृत्ति होकर हे डे निश्चय हो जाय कि न में शरीर हैं! आर ' हि पे न्राक्नण हूँ; न शुद्र हैं? किन्त अरग है! दतदानंदस्वरूप हूँ ॥ ओर प्रकाशरूप है ओर गा योमी हूँ आकाशवत् जर्रिते, मा अस्ति, भांति प्रिय इस प्र १ है। २ प्रतीत होता है। हे प्यारा है । बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 चेतन्यरूपसे सर्वेञ् व्यापक हूँ ॥ ऐसे हठ निश्चय अपरोक्ष ज्ञानवालेको जीवन्मुक्त कहते हैं ॥ अथ अपरोक्षज्ञानवर्णन । प्रश्न ॥ अपरोक्ष ज्ञान किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ वेदमें दो प्रकारके वाक्य हैं ॥ एक तो अबांतर वाक्य हैं ओर दूसरे महावाक्य हैं जो ऐसा बोध कराते हैं कि ब्रह्म शुद्ध है ॥ सच्चिदानंद है ॥ स्वीत्यामी है॥ ऐसा बोध करानेवालेकी अवांतर वाक्य कहते हैं॥ ओर अवांतरवाक्यों करके नो बोध होता हे सो परोक्ष ज्ञान हे ॥ ओर जो जीवब्रह्मकी एकताका बोध करानेवाले तत्त्वमसि आदिक वाक्य हैं तिनको महावाक्‌य कहते हैं ॥ ओर तिन महावाक्यों करके नो बोध होता है ॥ तिसको अपरोक्ष ज्ञान कहते हैं ॥ अथात् ब्रह्म कोई है ॥ ऐसे जाननेको परोक्ष ज्ञान कहते हैं ॥ ओर ब्रह्म में हूँ॥ ऐसे जाननेको अपरोक्ष ज्ञान कहते हैं॥ प्रश्न ॥ तत्वमसि आदि महावाक्योंमेंही प्रथम तो बांदप्रातवनॉ7080609ाता।.८एणा

 भेद मालूम होता है ॥ क्योंकि तत्त्वमासि इस महावाक्यका तो यह अथ हे कि सो ब्रह्म तू हे॥ ओर अहं बह्मास्मि ॥ इस महावाक्यका यह अथे है कि सो ब्रह्म में हूँ ॥ इस प्रकार महावाक्योंमें भेद मालूम होता हे ॥ तिस भेदकी निवृत्ति करो ॥ उत्तर ॥ तत्त्वमसि यह सामवेदका महावाक्य हे ह ॥ ओर अहं बल्मास्मि यह यजञवेदका महावाक्य है॥ ओर 'प्रज्ञानम ब्रह्म' यह ऋग्वेदका महावाक्य है॥ ओर 'अयमात्मा अह्म' यह अथवंण वेदका महावाक्य है॥ यह चार महावाक्य चारों वेदोंके हैं ॥ ओर इन महावाक्योंका आपसमें कुछभी भेद नहीं ॥ क्योंकि जब गुरु शिष्यको उपदेश करता हे कि तत्त्वमसि अथात् सो तू हे॥ इतना वाक्य शिष्यको अवण होतेही शिष्यकों ऐसा बोध होता है कि अहं ब्रह्मास्मि ॥ अथोत सो ब्रह्म में हूँ | इससे शिष्यको विपरीत बोध नहीं होता ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि तत्त्वमस्ति, अं ब्रह्मास्मि आदि महावाक्योंमें कुछभी भेद नहीं ॥ केवल इतनाही हे कि शिष्यको उबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

१०८ तत्बोध-टदीका । पदेश करनेके वास्ते तत्त्वमसि महावाक्य हे ओर अपने विचारनेके वास्ते अहं ब्रह्मास्मि महावाक्य हे ॥ परंतु दोनोंके अर्थमें कुछभी भेद नहीं ॥ शका ॥ तत्त्वमसि आदि महावाक्योंसे जब ऐसा अपरोक्ष ज्ञान हो जावे कि में ब्रह्म हूँ॥ तो फिर अन्तःकरणमेंसे मठविक्षेपकी निवृत्ति करनेका कुछभी प्रयोजन नहीं क्योंकि मलविक्षेपकी निवृत्ति होनेके पश्चात् भी तो ऐसाही ज्ञान होगा कि में ब्रह्म हूँ तो फिर निष्फल पुरुषाथ क्यों करे ॥ उत्तर ॥ सुनने सुनानेसे भलेही अपरोक्ष ज्ञान हो जावे कि में ब्रह्म हूं ॥ परंतु नवतक मलविशक्षेप दोष दूर होकर अनुभव अपरोक्ष ज्ञान नहीं होगा॥ तबतक परमानंदकी प्राप्ति कभी नहीं होगी तिसमें एक दृष्टांत है जेसे कोई एक राजा एक पंडितके ऊपर बहुत प्रसन्न था ॥ अर्थात् ऐसा मोहके वह हो रहा था कि जैसे उस पंडितकी आज्ञा होती राजा वेसेही करता॥परंतु एक दिन संपूर्ण मंत्रियोंने मिठकर ऐसा विचार किया कि राजाका
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकारिका । ३०९. मोहके वशमें होना यह राज्य नष्ट होनेका हेतु हे ॥ तब उन मंत्रियोंने उस पंडितसे कह दिया कि राजाजीकी आज्ञा तुमको दरबारमें आनेकी नहीं॥ ओर उस्ती वक्त राजासेभी कह दिया कि पंडितजीका शरीर बहुत बीमार हे | जब राजाने ऐसा सुना तब राजा बहुत दुःखी हुआ॥ ओर यह आज्ञा दी कि जो कुछ द्रव्य खरच पडे सो ले नाओ ॥ ओर वेद्यकी ठे जाकर उनकी ओषधी करो ॥ तब उन मंत्रियोंने बहुतसा द्रव्य ले जाकर परोंमें रख लिया ओर कुछ वेयको दिया॥ तब उप्त वेबने राजासे छोटकर यह कहा कि हे महाराज ! वह पंडितजी तो असाध्य बीमार हे॥ अथॊॉत् वह्ठ अच्छे नहीं होंगे॥ ऐसा सुनकर राजाने कहा कि हम आप चलकर पंडितनीको देखेंगे॥ जब मंत्रियोंने ऐसा सुना तब मंत्री बहुत घबड़ाये ॥ ओर उनमेंसेही किसी आदमीने यह कहा कि पंडितजीकी तो मृत्यु हो गई ॥ जब राजाने ऐसा सुना कि पंडितजीकी मृत्यु हो गई तब उसी समय राजा बेहोश होकर गिर पडा ॥ ओर महान दुःखी हुआ ॥ परंतु उस समय बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

११० तसवबीष-दीका । एक विद्वार आय प्राप्त हुआ॥ उसने राजाकों बहुत दुःखी देखकर उसने रानाकों उपदेश किया कि हे राजन ! तू तो बडा शूर वीर है ॥ ओर धममात्मा हे ॥ तने यह कायरता कहांसे धारण करी ॥ अथोत इस कायरताके धारण करने योग्य तुम नहीं हो ॥ तब राजाने कहा कि हे विद्वन ! मेरा सम्पूण राज्य नष्ट हो जाता ॥ ओर दारीरभी नष्ट हो जाता ॥ परंतु मेरेको इतना दुःख नहीं होता कि जितना इस पंडितकी मृत्युसे हुआ ॥ तब उस विद्वानने कहा कि हे राजन ! जो तुम जीवात्माको रोते हो तो जीवात्मा अमर हे ॥ ओर एक है ओर शुद्ध हे ॥ तो फिर उसकी मृत्यु और वियोग कहाँ सिद्ध हो सक्ता है ॥ ओर जो शारीरको रोते हो तो शरीर आदिअन्तवाला है ॥ ओर दुःखरूप हे! तो फिर उसके नाश होनेकी क्या चिन्ता है॥ ओर दूसरे एक दिन तुमारे शरीरकाही तुमसे वियोग हो जायगा तो फिर उस पंडितके वियोगका दुःख मानना यह अत्यन्त मूखंता है ॥ ऐसा सुनकर राजाको बोध बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८णाा

शुकरानन्दप्रकाशिका । १११ हो गया ॥ ओर राजाने उठकर यह आज्ञा दी कि जो कुछ द्रव्य खरच हो उसको ले जाकर पंडितजीके सब किया कम्मे करो॥ तब उन मंत्रियोंने द्व्यकों परोंमें रख लिया ओर लोटकर राजासे कहा कि पंडितजीके सब किया कम्म हो गये ॥ परंतु वह पंडित जब दरवारमें जाना चाहता था तभी उसको द्वारपाल नहीं जाने देते थे ॥ तब उस पांडितने ऐसा विचार किया कि जब कभी राजाकी सवारी निकलें तब उत्त समय राजाते मिलेंगे ॥ जब मंत्रियोंकी माठल्म हुआ कि पंडितजीने यह विचार किया है ॥ तब उसी समय मंत्रियोंने राजाको ऐसा संस्कार डाल दिया कि पंडितजी तो ब्रह्मरक्षस हो गये ॥ ओर हमको बहुत बडी चिन्ता है कि आपसे पंडितजीकी बहुत प्रीति थी इसवास्ते आपको पंडितजी कहीं दुःख नहीं देवे ॥ ऐसा सुनकर राजा बहुत दुःखी हुआ ओर बहुत डरा॥ परंतु एक दिन ऐसा समय आय प्राप्त हुआ कि राजाकी सवारी चली जाती थी तभी उस पंडितने एक मंदिरके बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

११२ तत्तबोध-टीका । ऊपर खडे होकर राजासे आशीर्वाद कहा ॥ तब उस राजाने देखा कि यह पंडितनी तो वही है ॥ परंतु जब उस पंडितकी मृत्युका ओर उसके बद्वराक्षस होनेका चिन्तवन जब राजाने किया तब राजाकों बहुत भय हुआ ॥ उस भयसे राजा उस पंडितको त्यागकर चला गया ॥ जेसे रानाको उस पंडितका अपरोक्षज्ञानभी हो गया कि यह पंडित वहही है ॥ परंतु वह ब्रह्मराक्षतभाव जो अन्तःकरणमें था उसने रानाको उस पंडितकी प्राप्ति नहीं होने दी ॥ इसी प्रकार सुनने सुनानेसे भलेही अपरोक्ष ज्ञान हो जावे कि में ब्रह्म हैँ ॥ परंतु जब तक ब्रह्मराक्षसभावरूप मलविक्षेप अन्तःकरणमें रहता हे ॥ तबतक परमानंदस्वरूप आत्माकी प्राप्ति नहीं होने देता॥ इसवास्ते श्रीगुरुके चरणोंमें प्राप्त होकर मलविक्षेपकी निवृत्ति करना अवइय उचित हे ॥ ओर मलविक्षेप दोष दूर होनेके पश्चात् जो अनुभव होता हे ॥ तिसको अपरोक्ष ज्ञान कहते हैं ॥ ओर तिस अपरोक्ष ज्ञानवालेकोही नीवन्मुक्त कहते हैं॥ऐसे जो मेरे श्रीगुरु हें तिनको मेरा कोटानुकोट प्रणाम हैं ॥ ४६ ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 अथ ज्ञानसे सम्पूर्ण कम्मोंकी निबत्तिवणन।
ब्रह्मवाहमस्मीत्यपरोक्षज्ञानेन निखिलकर्मबंधविनिर्मृक्त: स्थात् । कर्माणि कृतिविधानि संतीति चेत् आगामिसंचितप्रारव्धभेदेन जिविधानि संति॥ ४७॥ टीका॥ में ब्रह्म हूँ, ऐसे अपरोक्षज्ञान होनेसे पुरुष सम्पूर्ण कर्मोके बंधनसे छूट जाता है ॥ ओर वास्तव तो आत्मा कर्मोके बंधनसे रहितही है ॥ क्योंकि कर्मोका करना ओर उनके फलका भोगना यह मनका धमे है॥ किन्तु आत्माका नहीं ॥ परंतु भूलकर अपनेमें नो अध्यास करा हुआ हे कि में करता हूँ, में भोक्ता हूँ ज्ञानसे ऐसे अध्यासकी निवृत्ति होकर यह हृढ निश्चय हो जाताहै कि में तो शुद्ध हूँ. ॥ कत्तो भोक्ता मन है ॥ इस प्रकार अपरोक्षज्ञान होनेसे पुरुष सम्पूर्ण कम्मोंके बंधनसे छूट जाता है ॥ यदि तुम कहो कि कमे कोनसे हैं ॥ तो श्रवण करो। एक तो आगामी कर्म है, दूसरे संचित, तीसरे प्रारब्ध इस भेद करके तीन प्रकारके कमे हूँ ॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 : प्रश्न ॥ आपने तीन प्रकारके कम तो कहे ॥ परंतु अब भिन्न भिन्न इनके स्वरूपको वर्णन करो ॥ ४७ ॥ अथ आगामी कमंवणेन । ज्ञानोत्पत्त्यनंतरं ज्ञानिदेहकृतं पुण्यपा परुप कम यदास्त तदागामात्याभथा यते ॥ ४८ ॥ ७025 टीका ॥ ज्ञानकी उत्पत्तिके पश्चात् ज्ञानीक शरी रकरके जो पुण्यपापरूप कर्म हो॥ अथात् ज्ञानीसे जा सर्व पुरुषोंको उपदेश होता है सो तो पुण्यरूप कर्म है॥ ओर ज्ञानीके शरीरसे स्वाभाविक जो हिंसा हांती हूं सो पापरूप कम है ॥ तिस पुण्यपापरूप कमको आगामी कहते ह६॥ अथवा आर जा सव उुरुष इस समय पुण्यपापरूप कमे करते हैं॥ तिनकी आगामी कर्म कहते हैं ॥ ४८ ॥ अथ संचितकमवर्णन । संचितं कर्म किम । अनंतकोटिजन्गमनां बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । ११५७ बीजभूतं सत् यत्कमजातं पूर्वाजितं ति घ्वांते तत्संचितं ज्ेयस॥ ४९॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ संचित कर्म किसको कहते हैं ॥ उत्तर ॥ अनेक करोडों जन्मोंका बीनरूप हुआ हुआ जो कमे पूवेका किया हुआ शुभाशुभरूप ऐसा जो स्थित है तिसको संचित कम कहते हैँ॥ ४९ ॥ अथ प्रारब्धकर्म वर्णन । प्रारब्धकर्म किमिति चेत् । इदं शरीर मुत्पादथ इंह लाक एवं सुखदुःखांदप्रद यत्कम तत्प्रार्धभांगन नष्ट भवात॥७५०॥ टीका ॥ प्रश्न ॥ प्रारब्ध कर्म किसको कहते हैँ॥_ उत्तर ॥ इस शरीरको उत्पन्न करके इस छोकमें सुखदुखोंको देनेवाला जो कर्म है ॥ तिमप्तको प्रारब्ध कहते हैं ॥ ओर सो प्रारब्धकर्म भोगनेसेही नाश होता है॥ओर उसके नाश होनेकी कोईभी युक्ति नहीं ॥ह'्ान्त॥ जेसे किसी पुरुषने बहुतसे वाण तकेशमें रक्ख़े हुए हैं॥ ओर एक वाण हाथमें पकड रखा है॥ ओर एक बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

११६ तत्तबीध-दीका । बाण छोड दिया है ॥ जेसे वह पुरुष तर्कसके बाणोंकोभी रोक सक्ता है॥ ओर जो हाथमें पकड रक्‍्खा है तिस वाणकोभी रोक सक्ता हे परंतु नो बाण हाथमेंसे छोड दिया है ॥ तिसको नहीं रोक सक्ता॥ इसी प्रकार संचित कम नो वहुतसे जमा है॥ सो सब नाश हो सकते हैं॥ओर आगामी कम जो हाथम पकड रक्खे हैं सोभी नाश हो सक्ते हैं ॥ परंतु जो प्रारब्धरूप बाण हाथसे छूट गया है सो विना भोगे किसी युक्तिसेभी नाश नहीं हो सक्ता इस प्रकार आगामी ओर संचित कमे तो नाश हो सक्ते हैं ॥ परंतु प्रारब्ध कर्म विना भोगे नाश नहीं हो सक्ता है ॥ और वेदमेभी ऐसा लिखा है कि "प्रारब्धकर्मणां भोगादेव क्षयः " इति श्रुतेः ॥ अथे ॥ प्रारूध कम भोगनेसेही नाश होता है ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि ओर सर्वे कर्म तो नाश हो जाते हे परंतु प्रारब्ध कम विना भोगे नाझ नहीं होता है ॥ प्रश्न ॥ यहांपर तो ऐसा लिखा है कि प्रारच्ध कमें विना भोगे नाश नहीं होता ॥ ओर श्रीमद्धगवद्गीबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 तामें श्रीकृष्णनीने ऐसा लिखा है कि जेसे प्रचंड अग्मि सर्वे ईंधनको दाह कर देती है॥ इसी प्रकार ज्ञानरूप आग्नि सवेकम्मोको नाश कर देती है ॥ इन दोनों वाक्योंमिंसे कोनसा वाक्य यथाथ है सो कही ॥ | _ उत्तर ॥ यह दोनोंही वाक्य यथार्थ हैं ॥ क्योंकि कम्मोंका करना ओर सुखदुःखका भोगना यह शारीरका धमं है॥ आत्माका नहीं ॥ ओर जो पुरुष अपनेमें आरोपण करता है ॥ वह पुरुष अज्ञानी है ओर जिस पुरुषकों ऐसा ज्ञान हो गया कि में न कतो हूँ न भोगता हूँ॥ यह तो शरीरका पम हे ॥ शरीर भलेही भोगे ॥ में तो शुद्ध हूँ ॥ इस प्रकार ज्ञानवानका प्रारब्धकमंभी निवृत्त हो जाता है ॥ क्योंकि जिस किसी पुरुषकी पदार्थो्में आसक्तता होती है॥ उसी पुरुषको पदार्थोके नाश होने बननेसे सुखदुःख होता हे ॥ ओर निसकी पदारथौमें आसक्तता नहीं होती उसको सुखदुःख नहीं होता ॥ इससे यह सिद्ध हुआ कि आसक्ततादी सुखदुःखका हेतु हे ॥ जेसे चोपडके खेलनेवाले पुरुष काष्ठकी नदेमें आसक्तता कर लेते हैं ॥ ओर खेबांदप्रातवतना7080609ाता.८एा

 लते खेलते जिस पुरुषकी नदे मारी जाती है ॥ उसी पुरुषको दुःख होता है ॥ ओर जिस पुरुषकी वह नें नहीं होती उसको दुःख नहीं होता ॥ अब देखिये कि काष्ठकी नद तो मारी जाती हे ॥ परंतु आसक्तता होनेसे दुःख उस पुरुषकों होता है ॥ इसी प्रकार जिस पुरुपकी पदार्थोमें आसक्तता होती है ॥ उसीको सुख दुःख होता है ॥ ओर ज्ञानवानकी तो पदार्थोमें आसक्तता होतीही नहीं॥ इसवास्ते ज्ञानवानका प्रारूप कमंभी निवृत्त हो नाता है ॥ ओर वेदकाभी यही तात्पय्थे हे कि सूक्ष्म शरीर कर्म्मोको कतों हे ॥ इसवास्ते उसीकोही अवश्य भोगना पडता है ॥ किन्तु यह तात्पये नहीं हे कि आत्माहीको भोगना पडता है ॥ ५० ॥ संचितं कम ब्रह्मेवाहमिति निश्चयात्मकज्ञानेन नश्यति। आगामि कर्म अपि ज्ञानेन नश्यति | किच आगामिकमणां नलिनीदलगतजलवत ज्ञानिनां संबंधो नास्ति ॥ ५१॥

बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेकरानन्दप्रकाशिका । ११५९ टीका। में ब्रह्म हैँ ऐसे निश्चयात्मक ज्ञानसे संचित कर्म नाग हो जाते हैं ॥ ओर आगामी कमंभी ज्ञानसे नाश हो जाते हैं ॥ ओर आगामी कम्मोंका ज्ञार्नाको सम्बंध नहीं ॥ क्योंकि ज्ञानीके शररारसे जो क्रिया होती हे॥ सो सब स्वाभाविक होती है॥ किन्तु आसक्ततासे नहीं होती ॥ जेसे पत्ता वृक्षसे ट्टकर रससे रहित हो जाता है ॥ ओर उसको मिस तरफ वायु ले जावे वह उसी तरफ चला जाता हे ॥ परंतु अपनी इच्छासे कहीं नहीं जाता ॥ इसी प्रकार ज्ञानवानका शरीर कमरुपी वृक्षसे टूटकर इच्छारूपी रससे रहित हो जाता है ॥ ओर शरीरका प्रारब्धरूपी वायु जिस तरफ ले जावे ॥ ज्ञानवानका शरीर उसी तरफ चला जाता है परंतु अपनी इच्छासे किसी क्रियामेंभी नहीं प्रवृत्त होता ॥ओर इसवास्ते ज्ञानीको आगामी कर्म्मोका सम्बंध नहीं॥ कमलका पत्ता जलमेंह्दी रहता है ॥ परंतु नल उसको 'स्पशे नहीं करता ॥ इसी प्रकार ज्ञानीके शरीरसे स्वाभाविक भलेही शुभाशुभ रूप कम होवे परंतु उन कम्मोंका सम्बंध ज्ञानीको नहीं ॥ ५१ ॥ बांदप्रातना7080609ात्ा।.८एणा

१२७० ततबीध-टीका । अथ ज्ञानवानके आगामी कर्म्मोंके अधिकारीवर्णंन किच ये ज्ञानिनं स्तुवंति भजंते अचेयंति तान्प्रति। ज्ञानिकृतस आगामिपु ण्यं गच्छति ये ज्ञानिनं निदंति दिषंति दुःखप्रदानं कुवेति तान्प्रति ज्ञानिकृतु सव आगाम क्रिंयसाण यद्वाच्य कम पापात्मकं तहच्छति ॥ ५२ ॥ जो पुरुष ज्ञानीकी स्तुति करता है, ओर पूजन करता है, ओर सेवा करता है, ओर उनके वाक्योंको श्रवण करके धारण करता है उस पुरुषको ज्ञानीके आगामी पुण्यरूप कर्म प्राप्त होते हैं॥ ओर जो पुरुष ज्ञानीको दुःख देता है, ओर निंदा करता है, ओर ज्ञानीसे ट्रेष रखता है, तिस पुरुषको ज्ञानीके आगामी पापरूप कर्म प्राप्त होते हैं॥ इस प्रकार ज्ञानाको आगामी कम्मोंका सम्बंध नहीं होता ॥ ओर इसवास्ते ज्ञानीक
बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । १२१ फिर जन्मभी नहीं होता ॥ क्योंकि जन्मका हेतु पुण्यपापरूप कर्म है ॥ सो ज्ञानीके नाश हो जाते हैं॥५२॥ अथ आत्मज्ञानका माहात्म्यवर्णन । तथा चात्मवित्संसारं तीर्तो बल्मानंद इहेव प्राप्रोति ॥ ५३ ॥ टीका ॥ इसी प्रकार आत्मवेत्ता संसार समुद्रसे पार होकर इसी शरीरमें ब्ह्मानंदको प्राप्त हो जाता है ॥ ओर वेदमेंभी लिखा है॥ “तरति शोकमात्मविदिति” श्रुतेः ॥ अर्थ ॥ आत्मवेत्ता दुःखरूप संसारसे पार होता है ॥ ओर कोई पुरुष नहीं हो सक्ता।क्योंकि जेसे मकडी अपने थूकसे जालेकी पूरती है ॥ ओर अपने आपही उसमें फसकर दुःख पाने लगती है ॥ परंतु जबतक उसको यह ज्ञान नहीं होता कि यह जाला मेराही थूक है ॥ ओर इसके बनानेवालाभी मेंही हूं तवतक फसी हुईं महान दुःख पाती है ॥ ओर जब ऐसा निश्चय कर लेती है कि यह जाला मेराही थूक है ॥ ओर बनायाभी मेंनेही हे ॥ तब उस जालेकों खा लेती है ॥ ओर महान सुखी हो बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 जातीहे इसी प्रकार जवतक इस पुरुषको यह निश्चय नहीं होता कि यह संसार मेराही संकल्प है ॥ ओर संकलपका करनेवाला मेंही है ॥ तबतक संसारमें फँसा हुआ महादुःख पाता है ॥ ओर जब ऐसा हृठ निश्चय कर लेता है कि यह सब संसार मेराही संकल्प हे ओर यह संकल्प हुआभी मेरेहीसे हे ॥ तब संकल्पकों निवृत्त करके परमानंदको प्राप्त होता है ॥ इसी प्रकार आत्मवेत्ता श्ोकरूप संसारसे पार होता है ॥ «५४३ ॥ तनु त्यजतु वा काश्यां ध्पचस्य गृहे5थवा ॥ ज्ञानसंप्राप्ोसमय घमुक्ता$सा वगताशयः॥ इति स्मृतेश्व ॥ ५४ ॥ टीका ॥ ज्ञानवान् चाहे काशीजीमें शरीरको त्यागे ओर चाहे चांडालके गृहमें शरीरको त्यागे वह ज्ञानवान सम्पूर्ण जगह मुक्त हे ॥ ओर वही विगत आशय हे अर्थात् ज्ञानवानही विषयोंसे निवृत्त होता हे ॥ किन्तु अज्ञानी नहीं होता ॥ओर योगवासिष्ठ निवांण प्रकरणमें भी लिखा है ॥ ५४॥ बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शंकरानन्दप्रकाशिका । १२३ खलाः काले काले निशि निशितमोहैकमिहिकागतालोके लोके विषयशतचौराःसुचतुरा॥ प्रवृत्ताः प्रोचक्ता दिशि दिशि विवेकेकहरणे रणे शक्तास्तेषां क इवावहुपः आहयसु भटा/ ॥ १॥ अथा5न्वयः ॥ लोके विषयशतचौराः सुचतुराः कर्थभते लोके निशि निशितमेहिकामेहिकागतालोके ॥ कथ्थंशूताः चौराः खलाः पुनः कर्थन्ताः चौराः काले काले दिशि दिशि विवेकेकहरणे भोय्क्ताः प्रवृत्ताः ॥ तेषां विषयशतचौराणां रणे विदुषः प्रोश्य के सुधदाः शक्ताः ॥ इत्यन्वयः ॥ १ ॥ भाषाटीका ॥ पुरुषोंमें विषयरूपी सेंकडों चोर बड़े चतुर लग रहे हैं ॥ कोनसे पुरुषोंमें कि अज्ञानतारूपी रात्रि तिसमें पडा हुआ जो मोहरूपी कोहल तिसकरके नाग हो गई हे दृष्टि जिन पुरुषोंकी तिन पुरुषोंमें विषयरूपी सेंकडों चोर लग रहे हैं ॥ केसे हैं विषयरूपी चोर कि महान दुष्ट ॥ ओर फिरभी केसे हैं कि हरवक्त चारों तरफसे विवेकरूपी धनको चुरानेके वास्ते कमर बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

१२४ तत्तबोप-दीका । बांधे हुए तेयार हें॥ तिन विषयरूपी चोरोंके साथ विद्वानफे सिवाय कोनसा शूरवीर युद्ध करनेकी समर्थ है॥ अथोत ज्ञानरुप सुय्येकरके अज्ञानतारुपी रात्रि ओर मोहरूपी कोहल ना हो गया है जिस पुरुषका वह पुरुष उन विषयरूपी चोरोंके जीतनेकी समर्थ हे॥ किन्तु अज्ञानी उन चोरोंसे घोकाही खाता है ॥ ओर जानकी प्राप्ति विना श्रीगुरुकी कृपाके नहीं होती॥ १॥ प्रशन ॥ गुरु ओर शिष्य इन दोनोंके ठक्षण प्रथकू पृथक वर्णन करो॥ अथ ग़ुरुशिष्यलक्षणव र्णन । श्रांति ॥ ब्राह्मणी निर्वेदमायात् । तद्ठि ज्ञानाथ सहुरुमेवामिगच्छेत श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठ हति श्रवते!ः॥ १॥ हरिः डें# ॥ भाषाठीका ॥ ब्रह्मस्वरुप जो अपना आत्मा हे ॥ तिसको जाननेकी इच्छावाला पुरुष संसारसे विरागकों प्राप्त होकर सह्ुरुओंके चरणोंमें प्राप्त हो ॥ समित्पाणी॥ अथोत हाथमें दांतुन लिये हुए ओर गुरु केसे बांदप्रातवाना7080609ात्रा।.८एा

 होवे कि श्रोत्रिय अर्थात् वेद शास्रके ज्ञाता क्योंकि जो कुछ दिष्यको शंका उत्पन्न हो उसको निवृत्त कर देवे॥ ओर फिर केसे होते गुरु कि ब्रह्मनिष्ठ अर्थात् ब्रह्महीमें हो निष्ठा जिनकी क्योंकि जो केवल वेदशाद्रकेही ज्ञाता हुए ओर यथावत् निष्ठावाले नहीं हुए तो शिष्यकी शकाको तो निवृत्त कर देंगे परंतु मोक्ष नहीं कर सक्ते क्योंकि जब उनकी अपनीही मोक्ष नहीं हुईं तो फिर हिष्यकी मोक्ष क्या कर सक्ते हैं॥ ओर जो केवल ब्रह्मनिष्ठही हुए॥ ओर वेदशासत्रके ज्ञाता नहीं हुए ॥ तो वह अपनी मोक्ष कर सक्ते हैं ॥ परंतु शिष्यकी मोक्ष नहीं कर सक्ते क्योंकि जबतक प्रथम हिष्यकी शंकाही निवृत्त नहीं होगी ॥ तो उसकी मोक्ष क्या हो सक्ती है ॥ इसवास्ते गुरु श्रोत्रिय ओर ब्रह्मनिष्ठ दोनों ग्रुणोंवाले होने चाहिये॥ ओर शिष्यभी ऐसा होना चाहिये कि जो तन मन धन, यह तीनों वस्तु अपने अश्रीग्ुरुको अर्पंण कर देवे धन इस प्रकार अपेण नहीं किया जाता कि जो श्लीपुतादिकोंकों ग्रुरुके अर्पण करें॥ किन्तु ब्लीपुचरादिबांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

 कोंको त्याग करके श्रीगुरुके चरणोंमें प्राप्त होवे ॥ ओर तन इस प्रकार अपेण किया जाता हे कि जो कुछ गुरुओंकी आज्ञा हो उसीके अजुसार चेष्टा करना चाहिये॥ किन्तु उनकी आज्ञामें तर्क नहीं करना चाहिये ॥ आर मन इस प्रकार अर्पण किया जाता हे कि हर वक्त औगुरुके चपरणोका ध्यान करा करें ॥ ओर जिस तरफ हष्टि पडे उस तरफ श्रीगुरुह्दी दीखे इस प्रकार तन मन घन अर्पण करना यह लक्षण शिष्यमें होना चाहिये। ओर पूवोक्त लक्षण गुरुओंमें होने चाहिये॥ ओर पूर्वोक्त गुणयुक्त ४ मेरे श्रीगुरू हैं ॥ तिनको मेरा कोटान कोट नमस्कार हैं॥ ओर तिन गुरुओंके चरणोंकी ऐसी कृपा हे मेरे ऊपर कि निसको देखकर तिन बरणोंको में घन्यवाद हूँ परंतु ऐसी महिमा है तिन चरणोंकी कि जिसकै लिखनेकी मेरी लेखनीमें सामथ्ये नहों॥ क्योंकि तिन चरणोंकी ऐसी महिमा है कि निसके फलको प्राप्त होकर पबको चुप होना पडता है ॥ ओर अब तिन चरणोंकी ऊपासे मेंभी चुप होता हूं ॥ ॥ हारिः 5 ॥ ॥ समाप्त॥ कप कक कक बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

शेकरानन्दप्रकारिका । १२७ ॥ होरी ॥ कोई ऐसा रंग बनालो जासे नहीं छगे दाग तनको॥ ॥टेक॥सतसंग साबुन ठाय धो लो पापीरे मनको॥ विचाररंगमें बोर पहिर लो सूहे जामनको॥ १॥ होरी खेलन चलो यादकर पिछले फागुनको ॥ तू शुद्ध सचिदानंद भूल मत अपने आननको ॥२॥ ज्ञानगुलालकी फेट बांध अद्वेति अबीरनको॥ क्मकुमकुमा फेक छोड दे झूंठे खेलनको॥ ३॥ होरी जीतें सदा संत सब कर कर साधनको ॥ हाकर हो आनंद ध्याय जब श्रीग्रुचरणनको ॥४॥ ओऔीयुत परमहंसोदासीनभूषण श्री ३०८ शभ्रीस्वामी प्रकाशानंदजी महाराजके शिष्य स्वामी शंकरानदेने यह शंकरानन्दप्रकाशिका टीका निर्मित करी ॥ संवत् १९५३ आपषाढ शुझ्त द्वितीया रविवारपुस्तक मिलनेका ठिकाना- गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास, ४ रुक्ष्मीवेंकटेश्वर ” छापाखाना, ५ कल्याण-मुंब३. बांदप्रातवतना7080609ात्ा।.८एा

The text on this page is estimated to be only 0.00% accurate

बांदप्रातछ्ना7080609ाता।.८एणा